पंचम अध्याय
'अन्ततः' उपन्यास का प्रस्तुति शिल्प'

: पंचम अध्याय :

"अन्ततः" उपन्यास का प्रस्तुति शिल्प

५.१ शिल्प-विधि : स्वरूप :

"शिल्प" शब्द को रचना के कौशल के रूप में स्वीकार किया गया है। संस्कृत, अंग्रेजी, हिन्दी और अन्यान्य साहित्य में देखें तो शिल्प शब्द का अर्थ कहीं न कहीं रचना तथा रचना में कुशलता अर्थात कौशलपूर्ण रचना से लिया गया है। सर्वाधिक विवाद अंग्रेजी के "टेकनीक" शब्द को लेकर है। "टेकनीक" के पर्याय रूप में "शिल्प" शब्द के कई रूप मिलते हैं। शिल्प, शिल्पविधि, शिल्प-विधान आदि इन तीनों ही रूपों को टेकनीक शब्द का पर्याय माना गया है। " "शिल्प" शब्द का अर्थ है-कारीगरी, और विधि का अभिप्राय हैं-प्रणाली किसी भी रचना को प्रस्तुत करने की कारिगर प्रणाली ही उसकी शिल्प-विधि है। किसी वस्तु के निर्माण की जो-जो विधियाँ या प्रक्रियाएँ होती है उनके समुच्चय को ही शिल्पविधि के नाम से पुकारा जाता है।"[१]

शिल्प-विधि से तात्पर्य रचनाकार के निर्माण या रचना के नियम सिध्दान्तो से हैं। "साहित्यकार अपनी रचना के सृजन की प्रारम्भिक अवस्था से लेकर इसे कलात्मक रूप प्रदान करने की अन्तिम अवस्था तक जिन नाना प्रकार की विधियों, रीतियों एवं प्रक्रियाओं को काम में लाता है, वे सभी विधियाँ और रीतियाँ शिल्प-विधि के नाम से पुकारी जाती है।"[२] जिसका कोई परम्परागत रूप नहीं होता।

---

१. प्रा.सतीश पाण्डये : "कथाशिल्पी देवेश ठाकुर" - पृ.५३

२. डॉ.रेणु शाह : "कणीखनाथ रेणु का कथा-शिल्प - पृ.६

किसी भी कलाकृति के सृजन में मानसिक प्रक्रिया का विशेष महत्व है। सृजनकार या साहित्यकार एक संवेदनशील प्राणी है। वह मानव मन और सांसारिक जगत की सभी परिस्थितीयों, घटनाओं, समस्याओं एवं विषमताओं से प्रभावित होता है। जब कोई वस्तु या घटना उसके मन को आलोकित करती है तो उसका सृजक मन सृजन के लिये प्रेरित करता है। वह मनन एवं विश्लेषण द्वारा अपने भावजगत से नित्य-नयी-नयी साहित्यिक सामग्री की खोज और मूल्यांकन करता है तो दूसरी ओर चयन एवं क्रम निर्धारण द्वारा वह इस सामग्री को कलात्मक रूप देकर पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करता है। "रचनाकार अपनी अनुभूतियों को उपयुक्त ढ़ंग से अभिव्यक्त करने के लिए शिल्प सम्बन्धी, नये-नये प्रयास और प्रयोग करता रहता है। प्रतिभाशाली रचनाकार की अनिर्बन्ध प्रतिभा नये रूपों का निर्धारण करती है और नयी शिल्प-विधियों की खोज में लगी रहती है।"[१] आज युग परिवर्तन के साथ-साथ जीवन मूल्यों तथा मूलभूत सिध्दान्तो में भी परिवर्तन हुआ है। साथ ही जीवन विषयक धारणाएँ भी बदली हुई है। इस बदलते परिवेश में अनुभूत भावनाओं, क्रिया-कलापो, विचारों तथा अध्ययन अर्जित दृष्टिकोण को उचित अभिव्यक्ति देने के लिए आधुनिक उपन्यासकारों ने नव-नवीन शिल्प-विधियों को अपनाया है।

इसतरह उपन्यास के सृजन की आंतरिक प्रक्रिया ही उसकी शिल्प-विधि है जो उपन्यासकार के संवेनदनानुभूति एवं उद्देश को विभिन्न उपकरणों के माध्यम से औपन्यासिक रूप प्रदान करने की प्रक्रिया होती है। अतः उपन्यास शिल्प ही अपने-आप में किसी कृति को अभिव्यक्ति देने का उपयुक्ततम माध्यम है।

५.२ <u>प्रस्तुति-शिल्प से तात्पर्य</u> :

उपन्यासकार अपनी रचना में युग तथा समाज के संदर्भ में बदलते मानव-जीवन का व्यापक चित्र प्रस्तुत करता है। वह अपने मनोगत विचारों को सम्पादित करने के लिए या अपनी आत्माभिव्यक्ति के लिए कुछ विधियों और रितियों का सहारा लेता है और इनकी सहायता से अपनी रचना में मानवजीवन का सजीव चित्र खड़ा करता है। ये विधियाँ या रितियाँ

---

१. डॉ. पी.एस.पाटील : देवेश ठाकुर और उनका उ.साहित्य - पृ.२८७

ही उपन्यास कला या शिल्प-विधि है। उपन्यास की शिल्प-विधि के अन्तर्गत ये तत्व समाहित है- (१) उददेश्य (२) कथावस्तु (३) चरित्र-चित्रण (४) कथोपकथन (५) देश-काल-वातावरण (६) भाषा और शैली। इनमें से अंतिम दो तत्व (भाषा और शैली) प्रस्तुति-शिल्प कहलाता है।

उपन्यासकार मानव जीवन के किसी विशिष्ट पहलू को उजागर करने के उपयुक्त कथाविषय का या कथावस्तु का चयन करता है। जिसमें वह ऐसी घटना श्रृंखला को जन्म देता है जो रचना के उददेश्य को प्रकाश में ला सके। इन घटनाओं के कार्य-कारण के स्पष्टीकरण के लिए कुछ काल्पनिक पात्रों का सृजन भी आवश्यक होता है और ये पात्र अपने आचरण से विभिन्न घटनाओं को जन्म देते हैं। इन पात्रों के आचरण को एवं घटनाओं को यथार्थ, सजीव, विश्वसनीय एवं प्रभावोत्पादक बनाने के लिए उपन्यासकार इन्हें देशकाल की पृष्ठभूमि में प्रस्तुत करता है। और अन्त में वह मानव जीवन सम्बन्धी अपनी धारणाओं को ऐसी शब्द योजना द्वारा वर्णित करता है जो कथ्य रूप धारण कर हमारे सामने आता है। इसी कथ्य विषय की सफल अभिव्यक्ति के लिए लेखक एक विशेष ढंग को अपनाता है। उसे शैली कहते है। इन सभी तत्वों को साकार करने के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व भाषा है, "वास्तव में पात्रों, परिस्थितियों एवं वातावरण की विश्वसनीयता एवं यथार्थता तभी प्रतिष्ठित की जा सकती है जब इन सब के अनुकूल भाषा का प्रयोग हो।"[१]

EIC

"आज की समृध्द आलोचना ने यह दिखा दिया है कि, जितना उपन्यास का वस्तु मुल्यवान है, उतना ही उसका शिल्प भी।"[२] इसलिए आज के उपन्यासकार का मुख्य लक्ष्य कथ्य का "सम्प्रेषण" हो गया है। कथ्य के आयामों को सघनता प्रदान करने के लिए वह आवश्यकतानुसार शिल्प रूप का निर्माण करता है। इस संदर्भ में उसे न तो परम्परागत और न ही आरोक्ति शिल्प-रूप स्वीकार्य है। डॉ.देवेश ठाकुर का "अन्ततः" उपन्यास इसका प्रमाण है।

---

१. प्रा.सतीश पाण्डेय : "कथाशिल्पी देवेश ठाकुर - पृ.५७

२. डॉ.प्रदीपकुमार शर्मा : "हिन्दी उपन्यासोंका शिल्प विधान" पृ.२३

"अन्ततः" में देवेश ठाकुर ने शिल्पगत प्रयोगधर्मिता प्रस्तुत की है। प्रयोगधर्मिता केवल प्रयोग और नाविन्य के लिए न होकर अपने निश्चित मंतव्य को आकर्षक एवं कलात्मक ढंग से संप्रेषित करने में सफल हुयी है। सामान्य रूप से किसी भी रचनाकार के शिल्पगत अध्ययन के अंतर्गत उसकी संवेदना के धरातल, उसके कथ्य संप्रेषण उसकी प्रतिबध्दता के आयाम तथा जीवन दृष्टि के निरूपण के साथ साथ इन सबकी अभिव्यक्ति में उसे सफलता मिली है या नहीं, उसकी भाषा अनुभूति को प्रामाणिक रूप से प्रस्तुत करने तथा अर्थवत्ता प्रदान करने में सक्षम हो सकी है या नहीं। किन्तु, देवेश ठाकुर के "अन्ततः" उपन्यास में शिल्पगत अध्ययन के अंतर्गत शोधार्थी ने केवल प्रस्तुति शिल्प पर ही विस्तार से विचार किया है।

देवेश ठाकुर समीक्षक-विचारक होने के साथ साथ प्रगतिशील कथाकार भी है जिनके पास एक निश्चित एवं प्रगतिकामी कथ्य है। जिसे उन्होंने बार-बार अनेक प्रकार से अपनी रचनाओं में चित्रित किया है। उनके मतानुसार योग्य कथ्य की प्रस्तुति के लिए योग्य भाषा-शैली का प्रयोग भी महत्वपूर्ण होना चाहिए।

आज का पाठक योग्य कथा के साथ-साथ लेखक से योग्य, सार्थक और आकर्षक प्रस्तुति की अपेक्षा रखता है। इसी अपेक्षा को ध्यान में रखते हुए देवेशजी ने "अन्ततः" उपन्यास के माध्यमसे उसे पूरा करने का सफल प्रयास किया है जिसकी समीक्षा के लिए शिल्पकौशल का विस्तृत और गम्भीर अध्ययन आवश्यक है।

५.३ भाषा :

५:३:१ भाषा का स्वरूप :-

भाषा, भाव और विचार सम्प्रेषण का मूल तत्व है। बिना इसके किसी साहित्यिक कृति की कल्पना ही नहीं की जा सकती। भाषा के महत्व के बारे में डॉ.प्रतापनारायण टंडन कहते है - " एक उपन्यासकार अपनी कृति में जिस भाषाका प्रयोग करता है, वह दोहरे अर्थ में महत्व रखती है। प्रथमतः तो वह उपन्यासकार के मन में कथा के वैचारिक स्वरूप

को व्यक्त करती है, जिसके लिए उसके पास वही माध्यम होता है और उसके द्वारा वह उसे पाठकतक पहुँचाने में समर्थ होता है और द्वितीयतः वह अपने उपन्यास में जिन पात्रों की रचना करता है, अपने-अपने स्वतन्त्र व्यक्तित्व में वे भी पृथक सत्ता से युक्त होकर अपने हृदय की विविध अनुभूतियों और भावनाओं की प्रतीति दूसरों को करा देते हैं।"[१]

मानव के पास भावों को व्यक्त करने का सर्वाधिक सबल माध्यम भाषा ही है। जो साहित्यकार भाषापर आधिकार रखते हुए उसे केवल साधन ही नहीं साध्य भी मानकर चलता है, वही प्रभावी अभिव्यक्ति के द्वारा अपनी किसी विशिष्ट कृति में अपने पाठकों को बाँधि रखकर प्रभावित एवं अप्लावित भी कर सकता है। उपन्यासकार की मूल एवं वांच्छित संवेदनाओं को स्पष्ट अभिव्यंजित कर पाने में समर्थ भाषा को ही सफल कहा जा सकता है। अतः जीवन संदर्भों के अनुसार भाषा भी यथार्थ होनी चाहिए। डॉ.सुरेश सिन्हा कहते है कि, -"विकलांग भाषा किसी उपन्यास के कथ्य को न तो समर्थ बना सकती है, न किसी संवेदनशीलता की प्रतीति ही दिला सकती है। वह मानवीय संदर्भों को कोई सार्थक संज्ञा भी नहीं दिला पाती। अपनी सूक्ष्मता, पैनेपन एवं काव्यात्मक व्यंजनाओं से ही उपन्यासों की भाषा आज अर्थवान हो सकती है।"[२]

भाषा के अन्तर्गत निम्नलिखित रूपों का अध्ययन आवश्यक है -

(१) शब्दप्रयोग के विभिन्न रूप।

(२) भाषा सौंदर्य के साधन।

(३) प्रतीक।

(४) बिम्ब।

(५) मुहावरें।

(६) सुक्तियाँ।

और (७) वाक्य-विन्यास।

---

१. डॉ.प्र.टंडन : "हिन्दी उपन्यास कला" - पृ.२५४

२. डॉ.सुरेश सिन्हा : "हिन्दी उपन्यास" - पृ.३९४

५:३:२ शब्दप्रयोग के विभिन्न रूप :-

सतीश पाण्डेय कहते हैं कि, "शब्दों के विविध स्वरूपों का विधान, भाषा में सौन्दर्य लाने के लिए विविध उपकरणों का उपयोग, मुहावरों और कहावतों की समन्विति, वाक्यों की कलात्मक योजना तथा भाषा की युगानुरूप अभिव्यक्ति आदि के कारण देवेश ठाकुर के उपन्यासों की भाषा सहजता और सौन्दर्य की प्रभोज्ज्वलता अनायास ही परिलक्षित होती है।"[१]

"उपन्यासकार देवेश ठाकुर की भाषा पात्रानुकूल, सूक्ष्म, सांकेतिक और पैनेपन से युक्त है।"[२] उन्होंने अपने अन्य उपन्यासों की तरह "अन्ततः" उपन्यास में भी खड़ीबोली के साथ ही देशी-विदेशी स्त्रोतो से विविध प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया है। जैसे -

(१) तत्सम शब्द।

(२) तद्भव शब्द।

(३) बम्बइया हिन्दी के शब्द।

(४) विदेशी शब्द - (अ) अरबी शब्द।

(ब) फारसी शब्द।

(क) अंग्रेजी शब्द।

(५) अन्य शब्द - (प) द्विरूक्त शब्द।

(फ) ध्वन्यार्थक शब्द।

(ब) निरर्थक शब्द।

(भ) अपशब्द।

(म) नये रचित शब्द।

५:३:२:१ तत्सम शब्द :-

देवेशजीने स्वाभाविकता के साथ पात्रानुकूल तत्सम शब्दों का प्रयोग किया है, जिसमें भावों की पूर्ण अभिव्यक्ति और बोधगम्यता मिलती है। "अन्ततः" में प्रयुक्त कुछ तत्सम शब्द यहाँ प्रस्तुत है। -

---

१. प्रा.सतीश पाण्डये : "कथाशिल्पी देवेश ठाकुर" - पृ. ८४

२. डॉ.पी.एस.पाटील : "देवेश ठाकुर और उनका उ.साहित्य" - पृ.२९०

"राजनीति, अभिवादन, व्यस्तता, संकल्प, संवेदना, रोमांच, आकाश, ग्लानि, समय, कटि, प्रतिक्षा, निरंकुश, उद्विग्न, कपोल, अप्रत्याशित, प्रबुध्द, संस्कार, संघर्ष, छाया, जिजीविषा, कृतज्ञ, रक्तिम आदि।"[१]

५:३:२:२ तद्भव शब्द :-

प्रस्तुत उपन्यास में तत्सम शब्दों के साथ-साथ तद्भव शब्दों का भी प्रयोग किया गया है जिसके कारण उपन्यास की भाषा जनजीवन की भाषा बन गयी है। कुछ शब्द ग्रामीण क्षेत्र में बोले जाते है। जैसे -

"कागज, रात, दो-टूक, आँसु, आदि।"[२]

ग्रामीण क्रियाओं का प्रयोग : "सुस्ता सकना, टुकूर-टुकूर देखना आदि।"[३]

५:३:२:३ बम्बइया हिन्दी के शब्द :-

देवेशजी के "अन्ततः" उपन्यास की केन्द्रभूमि बम्बई रही है जहाँ सामान्य लोगों के बोलचाल की हिन्दी शुध्द खड़ी बोली हिन्दी से सर्वथा अलग है। बम्बइया हिन्दी के स्वरूप पर अलग-अलग भारतीय भाषाओं का प्रभाव स्पष्ट है। पात्रों की मातृभाषा के प्रभाव से शुध्द हिन्दी का रूप विकृत हो उठता है लेकिन देवेश ठाकुरजी ने विशेष परिस्थितियों में बम्बईवासी पात्रों का आभास दिलाने के लिए टूटे-फूटे एवं विकृत शब्दों का उपयोग करके भाषा को स्वाभाविक बनाया है। जैसे -

"शींगदाणा, दलिया, बाई, फून, बहिन, आदि।"[४]

५:३:२:४ विदेशी शब्द :-

हिन्दी में विदेशी शब्दों का प्रयोग हमेशा से होता रहा है। हिन्दी में उर्दू के शब्द घुलमिल गये हैं। उर्दू शब्दों का मूल स्त्रोत अरबी, फारसी है। उर्दू के कुछ शब्द ऐसे

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.८,१३,२०,२२,२८,२८,३६,३६,४५,५४,५६,५९,६०,६३, ६३,६४,६६,६७,७४,१४१,१४३,१४५।
२. - वही - - वही - - पृ.१६,३९,७३,११७।
३. - वही - - वही - - पृ.७४,९६।
४. - वही - - वही - - पृ.८,३७,१२२,१२२,११६।

है जो हिन्दी में पूर्णतः स्वीकृत हो चूके हैं। अंग्रेजी के अनेक शब्दों का प्रयोग सभी भारतीय भाषाओं में हो रहा है। अतः देवेशजी ने भी "अन्ततः" उपन्यास में विदेशी शब्दों का प्रयोग कर भाषा को सहजता एवं स्वाभाविकता प्रदान की है।

५:३:२:४:१ अरबी शब्द :-

"नक्श, इंतजार, ताज्जुब, दुनिया, दायरा, इबारत तकलीफ, मंजिल, जिल्लत, आदि।"[१]

५:३:२:४:२ फारसी शब्द :-

"अखबार, खामोशी, बेजान, जिन्दगी, रोज-रोज, नुमाइश, गलतफहमी, तल्खी, खामख्याली, दस्तक, चेहरे, तुर्शी, बेहाली आदि।"[२]

५:३:२:४:३ अंग्रेजी शब्द :-

"अन्ततः" उपन्यास में अंग्रेजी के शब्दों का खुलकर प्रयोग किया है। उपन्यास का केन्द्र बम्बई होने के कारण और भारतीय जनजीवन में अंग्रेजी शब्दों का प्रचलन अधिक मात्रा में होने के कारण पात्रों के यथार्थ जीवन को प्रकट करने के लिए अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग उचित ढ़ंगसे किया गया है। उपन्यास के हर पृष्ठ पर अंग्रेजी के शब्दों और वाक्यों को देखा जा सकता है। कहीं कहीं तो आधा वाक्य अंग्रेजी और आधा हिन्दी का प्रयुक्त हुआ है। तो कहीं कहीं अंग्रेजी के कुछ शब्दों को हिन्दी व्याकरण के नियमानुसार परिवर्तित किया है। जैसे - "कॉन्ट्रेक्ट, प्रेस-क्लब, कम्फर्टेबल, रिसेप्शन, सेंटीमैंटली, अंडरस्टेन्ड, फ्लर्टेशन, एस्केपिज्म, कम्पनसेट, मोनोटोनस, डिगनेट्रीज, वैलविशर, परमिशन, कनर्सन, सिंपलीफाईड, एंनेजमेन्ट, बिहेवियर, एडवरटाइजिंग, सिम्पलटन, एक्सपोज, सिंसियारिटी, आदि।"[३]

इसप्रकार अंग्रेजी शब्दों की भरमार के साथ ही हिन्दी और अंग्रेजी के आधे-आधे

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.९,६४,७२,९०,९५,११३,१३६,१४१,१४५।
२. - वही - - वही - - पृ.७,१२,१९,२१,२७,६५,७०,८०,८८,९५,९८,१०५,११४।
३. - वही - - वही - - पृ.२८,३०,३१,३८,४४,४५,४६,४७,६४,६५,६८,७२,७३,७५, ७६,८०,८१,८६,८९,९०,९१।

वाक्य भी मिलते हैं। जैसे -

"इनके फादर की डैथ हुई है न इसी साल।"

"मैंने अपनी एक फ्रेंड को टाइम दे दिया है।"

"फ्लर्टेशन मेरे स्वभाव में है नहीं।"

"यह एस्केपिज्म है।"

"मुझे मिसअंडरस्टैंड मत करना वसुधा।"[१]

इसीतरह कही-कंही पर पूरा वाक्य ही ओजी का मिलता है। -

"बी इजी वसुधा हेअर आई एम ओनली पंकज। नॉट मिस्टर पसरीचा-द एडीटर।"

"प्लीज डोंट इन्सलट मी लाइक दिस।"

"डोन्ट मिस्टेक मी.....। वसुधा आइ एम योर वैल विशर। रिमेम्बर इट।"

"लीव इट वसुधा। आई डोंट वॉंट टू डिस्टर्ब यू। कम अप। बी ए गुड गर्ल।"[२]

५:३:२:५ <u>अन्य शब्द</u> :-

भाषा में सहज स्वाभाविकता एवं पात्रानुकूलता लाने के लिए लेखक ने अन्य कई प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया है। -

५:३:२:५:१ <u>द्विरूक्त शब्द</u> :-

"रूकते-रूकते, गठरी-गठरी, हलके-हलके, भारी-भारी, कभी-कभी, एक-एक, धीरे-धीरे, जल्दी-जल्दी, बार-बार, तिल-तिल, कौड़ि-कौड़ि, कहते-कहते, खोयी-खोयी, कदम-कदम, मधुर-मधुर, मंद-मंद आदि।"[३]

५:३:२:५:२ <u>ध्वन्यार्थक शब्द</u> :-

"अन्ततः" उपन्यास में देवेशजी ने कुछ ध्वनिमूलक शब्दों का सुन्दर प्रयोग करके वातावरण की यथार्थ स्थिति का चित्रण किया है। जैसे -

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.२९,३८,४६,४७,७२।
२. - वही - - वही - - पृ.४३,४८,९१,१२७।
३. - वही - - वही - - पृ.१२,२१,२२,२५,२७,४६,५६,५७,५८,६५,६६,७३,८२,९०, ९९,९९।

"दिवार घडी की "टन-टन-टन", सैंडिलों की "टक-टक" आवाज तथा, सुइयों की "टिक-टिक" आदि।"[१]

५:३:२:५:३ निरर्थक शब्द :-

"चहल-पहल, उलटते-पुलटते, मूड-वूड, मन्त्री से लेकर सन्तरी।"[२] जैसे शब्द निरर्थक है किन्तु भाषा में स्वाभाविक प्रवाह लाने की कोशिश में प्रयुक्त हुए है।

५:३:२:५:४ अपशब्द :-

साहित्य में अपशब्दों का प्रयोग अवांछित होता है, किन्तु कभी-कभी पात्रानुकूल भाषा का निर्माण करने के लिए इनका प्रयोग आवश्यक होता है। देवेशजी के "अन्ततः" उपन्यास में बहुत ही कम मात्रा में अपशब्दों का प्रयोग हुआ है। जैसे "खुसटों, डोंट बी सिली, बदतमीजी, स्टूपिड, घटिया, मूर्ख, बेवकूफी आदि।"[३]

५:३:२:५:५ नये रचित शब्द :-

आधुनिक काल के उपन्यासकारों में शब्दों को नये अर्थ प्रदान करने तथा नये शब्दों का निर्माण करने की प्रवृत्ति अधिक प्रचलित है। देवेशजी ने भी अपने उपन्यास में कुछ शब्दों का सर्वथा नवीन अर्थों में प्रयोग किया है। जैसे -

"भागमभाग, घुमडन, उपपत्नी, आगम-देह, टुच्चे, लीपापोती, आदतन, आशा-दूराशा आदि।"[४]

५:३:३ भाषा सौन्दर्य के साधन :-

भावों को व्यक्त करने का साधन भाषा ही है इसलिए भावों एवं विचारों की सफल एवं आकर्षक अभिव्यक्ति ही रचना को सार्थकता प्रदान करती है। स्वातंत्र्योत्तर उपन्यासकारों ने अभिव्यक्ति को सुन्दर एवं प्रभावशाली बनाने के लिये भाषा के विभिन्न उपकरणों का

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.६०,७९,१३२।
२. - वही - - वही - - पृ.८,९,१४,११३।
३. - वही - - वही - - पृ.८,४८,५९,७७,१०६,११६,१४४।
४. - वही - - वही - - पृ.२०,२३,४८,६१,११८,१४०,१४९,१५०।

प्रयोग किया है। देवेशजी ने भी "अन्ततः" उपन्यास में कुछ प्रमुख उपकरणों को प्रयुक्त किया है।

५:३:३:१ विशेषण :-

देवेशजी ने नये-नये विशेषणों का आविष्कार किया है। जिनके प्रयोग से शब्दों को नयी अर्थवत्ता प्राप्त हुयी है। इन विशेषणों का सार्थक प्रयोग भाषा-सौन्दर्य की अभिवृध्दि में सहायक बन पड़ा है। जैसे - "पनीली आँखे, उदास-मायूस संध्या, अमृत-नहायी धरती, फुहड़ हँसी, गुनगुनी धूप, गुलाबी चेहरा, सरकारी निगाह, सुन्दर दोस्त, दमघोटू खामोशी, सजीली आँखे, खामोश पौधे, भद्दी शर्त, रक्तीम ओंठ, मृटमैला सागर, भोथरे तर्क आदि।"[१]

५:३:३:२ रूपक :-

भावों के सफल संप्रेषण के लिए रूपकों का निर्माण एवं प्रयोग "अन्ततः" उपन्यास में हुआ है। जैसे "संभावनाओं के युगल, शीतकाल की शीला, साँवले गालों का गुलाबीपन, खुली आँखों का औत्सुक्य, नाखूनों की कलात्मक गोलाई, ममता की तरंग दिवस की सुनहरी पोशाक, चेतना की रोशनी, मन-प्राणों की शुभ्रता, आत्मदया के पंख, सूर्य का शैशव आदि।"[२]

५:३:३:३ उपमान :-

नये उपमान भाषा को आकर्षक तथा अभिव्यक्ति को सशक्त बनाने में सहायक हुये है। जैसे,-

"उसके कमल से ताजे मुख पर ही तो रीझ गए थे।"

"कपटी, व्यवसायी सा भोलापन।"

"उसका अपना व्यक्तित्व पश्चिम के धुंधलाते सूर्य-सा डूबता खोता जा रहा है।"

"और एक भीनी सी मुस्कराहट।"

"सौंधी गंध उसके मन-प्राणों को वृन्दावन सा पावन बना रहा है।"

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.२२,२१,२६,५६,६२,६३,६८,८७,११८,१२६,१२८,१४६, १४६,१४७,१४७।

२. - वही - - वही - - पृ.२१,५५,७०,७०,७०,९५,९९,९९,९९,१४७।

"उनका चेहरा धुले-नहाए बोगनविला के फूलों सा दिपदिपा उठा है।"

"उसकी वाणी में शिशु की सी सहज सौम्यता है।"

"एक हल्की सी उधेड़बुन उनके भीतर मंडरा रही है। बाहरी तौर पर वे शिला से स्थिर है....।"[१]

५:३:४ प्रतीक :-

विषयवस्तु को बोधगम्य एवं सुग्राहय बनाने के लिए प्रतीकों का प्रयोग किया जाता है। इनके द्वारा सशक्त विचारों को बहुत छोटी जगह में बाँध दिया जाता है। मानव-मन की तमाम जटिलताएँ ऐसी है जिन्हें विपुल प्रयासों के बाद भी शब्द या भाषा बध्द नहीं किया जा सकता। ऐसी मनोविश्लेषणात्मक गुत्थियों का प्रकटीकरण प्रतीकों के द्वारा ही हो सकता है। इसीलिए स्वातंत्र्योत्तर उपन्यासकारोंने मनोवैज्ञानिकता के विकास के साथ-साथ प्रतीकात्मक भाषा का भी सहारा लिया है। देवेश ठाकुरजी ने भी अपने उपन्यासों में स्थान-स्थान पर प्रतीकात्मक भाषा का प्रयोग करके गूढ़ एवं रहस्यमय विषयों को सहज-स्वाभाविक ढंग से अभिव्यक्त किया है। "अन्ततः" की वसुधा को अपना कद भी मिनी टेलिविजन की तरह छोटा हो गया लगता है।"[२] आदि कुछ प्रतीकों के उदाहरण यहाँ प्रस्तुत है -

"....गठरी-गठरी समय बीत गया है.....बीतता है। कभी कछुआ चाल से बीतती दोपहरी की तरह। कभी उदास-मायूस संध्या की तरह।"

"पसरीचा के लिए पद्मा का सौन्दर्य कीचड़ बन गया था। ऐसा कीचड़, जिसमें कमल नहीं खिलते कीड़े रेंगते है।....उसे ही वे अपने गले की फाँस महसूस करने लगते थे।"

"एक अंकुर उगा ही था कि यथार्थ के तपते मौसम ने उसे कुम्हला दिया। देखते-न-देखते शंकाओं के कितने कटीले जंगल उस नन्हें से कुम्हलाए अंकुर के आस-पास उग आए। मीठे मौसम का रस फीका पड़ गया।"

"सामने का समुद्र दूर तक दिखाई पड़नेवाला बंजर लग रहा था। डूबती उतराती नावें सफेद कब्रगाहों सी लग रही थी। एक सन्नाटा उसके भीतर चिखने लगा था।"

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.२२,३६,५९,७५,१४७,१५२,१५२,१५२।

२. - वही - - वही - - पृ.६०

"कभी-कभी ठूँठ भी सुन्दर लगता है लेकिन वह छाया नहीं देता।"

"आकाश भी गुमसुम है। ठीक उनके मन की तरह। आकाश । मन। मन का प्रतिबिम्ब-आकाश।"

"आसमान बादलों से भरा है। वह आकाश उनके मन के गहरे में फ्रीज होने लगता है।..उनका पूरा अस्तित्व ही जैसे बादलों की तरह धुंधला गया है।"[१]

उपर्युक्त उदाहरणों में "मिनी टेलीविजन" वसुधा के कुंठित जीवन का, "कछुआ चाल" और "उदास-मायुस संध्या" समय की गती का, "कीचड़" पद्मा की गंदी हरकतों का, अंकुर किसी के प्रति आकर्षण का और "कटिले जंगल" मर्यादाओं का, "आकाश" मन का, बादल मन की कमजोरियों का, ठूँठ-निरूद्देश्य जिंदगी का प्रतीक है।

५:३:५ बिम्ब :-

भाषा के सौन्दर्य को आकर्षक बनाने के लिए रचनाकार बिम्बों का सृजन करता है। जिनके माध्यम से अभिव्यक्ति कलापूर्ण हो जाती है। देवेश ठाकुर ने परिस्थिति और परिवेश के सुन्दर चित्रांकन के लिए बिम्ब योजना की है। जैसे - "....लेकिन मन है, खुल-खुल जाता है। पद्मा की केश राशि की तरह।"

".....एक ज्वार आता है भीतर से और अजस्त्र आँसुओं के रूप में ढुलक पड़ता है।

"...उसका हृदय खुला है और कहीं दूर से आती सौंधी गंध उसके मन-प्राणों को वृन्दावन सा पावन बना रही है।"

"....बाहर मटमैला सागर बह रहा है। भीतर सूर्य का शैशव कल्लोल कर रहा है।"

".....देखने की प्रक्रिया में उनका चेहरा धुले-नहाए बोगनविला के फूलों सा दिपदिपा उठा है।"[२]

५:३:६ मुहावरें :-

मुहावरों का प्रयोग भाषा में सौन्दर्य लाने के लिए होता है। मुहावरे भाषा की गति ठीक रखने, उसमें उपयुक्त प्रवाह लाने और सरसता तथा ओज उत्पन्न करने में सबसे

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.२१,३६,१०४,१०३,७४,१२७,१५०।
२. - वही - - वही - - पृ.२१,११७,१४७,१४७,१५२।

अधिक सहायक होते है। "अन्ततः" उपन्यास में देवेश ठाकुर ने भी मुहावरों को नये अर्थबोध की शक्ति से सम्पन्न करके प्रयुक्त किया है। कुछ मुहावरे यहाँ प्रस्तुत है -

"गड़ जाना, ऊहापोह चलना, रेशा-रेशा निचुड़ना, रस-भीनी होना, तहस-नहस करना, एक दूसरे में समाना, लधर जाना, हृदय में हुक सी मचाना, पोर-पोर में समाना, निढ़ाल होना पापड़ बेलना, रग-रग में बसना, रत्ती-रत्ती हिसाब जानना, आँखे फाड-फाडकर देखना, आकाश-पाताल एक होना, अंगूठे पर रखना, हक्की-बक्की रहना, चेहरा राख पुता होना, आदि।"[१]

५:३:७ <u>सुक्तियाँ</u> :-

रचनाकार अपने जीवन के अनुभवगत सत्य को सूक्तियों का रूप देता है। लेखक के संघर्षमय जीवन के खट्टे-मिठे अनुभव "अन्ततः" उपन्यास में उभरे हैं। सुक्तियों के उपयोग से भाषा में सौन्दर्य और अर्थ गांभीर्य की अभिवृध्दि हुई है। जैसे -

"निरूद्देश्य भागते रह कर इंसान कहीं नहीं पहुँचता।"

"कलुष-अकलुष, पवित्रता-अपवित्रता का सम्बन्ध मन से होता है, शरीर से नहीं।"

"शब्द सब कुछ कहाँ कह पाते है। उनकी सीमा है।"

"जो बाहर शांत दीखते है, वे भीतर उतने ही अशांत रहते है।"

"जो खुद दिशाहीन हो, वह क्या दिशा देगा।"

"अपेक्षा हमेशा दर्द ही क्यों देती हे। व्यक्ति है तो अपेक्षा भी है।"[२]

"अस्थिरता आत्मविश्वास की कमी से आती है।"

"अपने मूल्य और अपनी मर्यादाएँ - सबको व्यक्ति अपनी जरूरतों के अनुसार ही बनाता है।"

"यह जिन्दगी लकीरों से बनी श्रृंखला है। हर दिन एक लकीर कटती जाती है।"

"इन्सान अनिश्चय की स्थिति में बहुत पीड़ा सहता है।....मानसिक पीड़ा आदमी को पोर-पोर तोड़ती है।

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.२१,२२,२५,२५,३४,३४,४९,४९,५५,६०,६६,६७,१०४, ११६,११७,१४४,१०३,१०३।

२. - वही - - वही - - पृ.४७,४७,५०,६२,७१,९३।

"भविष्य में आनेवाले दिनों को एक उद्देश्य के साथ जीया जाए तो अपने सार्थक होने का अहसास होता है।"

"सामाजिकता को लेकर चलने वाला प्यार-प्यार नहीं होता.....समझौता होता है....।"[१]

५:३:८ वाक्य विन्यास :-

पदों का परस्पर ठीक सम्बन्ध रखने से ही शुध्द वाक्यरचना होती है। पदों का सम्बन्ध परस्पर ठीक रखने के लिए अन्वय, क्रम और वाक्य प्रयोग को ध्यान में रखना आवश्यक है। स्वातंत्र्योत्तर रचनाकारों ने कथ्य की नवीनता का सार्थक संप्रेषण करने के लिए नयी वाक्य परम्परा का आरम्भ किया है। नये-नये वाक्य प्रयोग होने लगे है। प्राचीन वाक्य-विन्यास नये भावबोध के अनुरूप अर्थवहन करने में असमर्थ हो गये। वाक्य-विन्यास में नवीनता लाने के लिए पात्रों की मनःस्थितियों के अनुकूल अधूरे और अपूर्ण वाक्यों का सहारा लिया गया। प्रा.सतीश पाण्डये के मतानुसार - "जीवन के इन विविध पहलुओं को प्राचीन परम्परागत वाक्य-विन्यास के माध्यम से अभिव्यक्त करना दुष्कर था। इसीलिए इन्होंने परम्परागत व्याकरण सम्मत वाक्य विन्यास में परिवर्तन करके उन्हें नये अर्थबोध से युक्त किया।"[२]

देवेशजी ने "अन्ततः" में कहीं पर कर्ता-विहीन वाक्य प्रयुक्त किये हैं, तो कहीं कर्ता का प्रयोग वाक्य के अन्त में किया गया है। उदाहरणार्थ -

— अन्त में कर्तावाले वाक्य :-

'.....खाली थोड़े ही बैठा जाएगा मुझसे....।"

".....कितना समय चाहिए तुम्हें।"[३]

— अनिश्चित क्रम वाले वाक्य :-

".....समाज की इतनी जिल्लत मोल क्यों लूँ ?"[४]

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.१११,१२९,१३२,१३९,१४०,१४५।
२. सम्पा.सतीश पाण्डये : "कथाशिल्पी देवेश ठाकुर" - पृ.९९।
३. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.२६,४७।
४. - वही - - वही - - पृ.१४५।

— पात्रों की परिस्थिति,मानसिक उद्वेलन के अनुसार अधूरे वाक्य :-

"……महिलाओं की बातों में मुझे कोई रस नहीं आता। बस, इसीलिए....।"

"मेरी सम्पन्नता से खेलने वाले मुझे बहुत मिल जायेंगे..... लेकिन, मेरी भावना, मेरी महत्वाकांक्षा को समझनेवाला.....?"

"मैं नहीं चाहता कि तुम गलत आदमियों से मेल-जोल रखो.....। ये बड़े लोग.....।"

".....सिन्सियर लोगों के प्रति मेरे मन में इज्जत होती है। और कुछ नहीं तो इसी नाते....।"

".....ऐसा क्यों समझते हैं आप.....। आप....।"[१]

— टूटे बिखरे तथा छोटे छोटे वाक्य :-

"……रम.....। और देखो, थोड़ा गरम पानी....।"

"अच्छा .....। गुड.....। कुछ लेंगी ?"

"और दूसरी बधाई.....। आप समझ गए न....।"

"थैंक यू सर....लेकिन मेरे साथ.....।"

"दो हजार स्क्वायर मीटर है। तीन बिल्डिंगे बन जाएँगी।"[२]

— क्रिया-विहीन वाक्य :-

"गाड़ियो की लम्बी कतार है। रंग बिरंगी गाड़ियाँ। टैक्सियों की पीली छतें। खम्भों पर लटकती हुई दुधिया रोशनी।....बायीं ओर मरीन ड्राइव है।"

"खुली बाल्कनी। बोगनविला की लतरें। लाल-पीले फूल।"

"थ्री एक्स। जार। गुनगुना पानी। ऑमलेट। कारें। नीली, लाल, दूधिया, आसमानी, काली,चाकलेटी.....।"[३]

— मूक भाषावाले अथवा मौनाभिव्यक्तिवाले वाक्य :-

"कहाँ रहती हो.....?"

-".....?"

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" पृ.४६,६३,१०६,१२०,१३६।
२. - वही - - वही - पृ.७,९,९,११,१३।
३. - वही - - वही - पृ.१२,२०,२०।

"सबका कारण सिर्फ औपचारिकता ही थी....। बोलो....

-".....।"

-"मैं जानता हूँ, तुम नहीं बोलोगी। सच के साथ ज्यादा देर तक तर्क नहीं किया जा सकता।"

-".....।"[१]

— <u>हिन्दी वाक्य का अंग्रेजी अनुवाद दोहराने वाले वाक्य</u> :-

"इसी लिए तो.....दैट इज व्हाई।"

"हमारे बीच फॉरमैलिटी है....एक तरह की औपचारिकता है।"

"इस बार उसके स्वर में सीधापन है। स्टेट फार्वर्डनेस।"[२]

— <u>बिना अंग्रेजी शब्दों वाले वाक्यों में अंग्रेजी वाक्यों का प्रभाव</u> :-

'मेरी एज्युकेशन हिन्दी में हुई है।"

"अगले मण्डे से चेंज होगी।"

"मैं तुम्हें बडा ब्रॉड माइंडेड समझती थी।"

"उसकी च्वाइस अच्छी है।"

"इसीलिए तो मैंने तुम्हें इन्वाइट किया है।"

"उनकी वाइफ अच्छी फ्रेंड है मेरी।"[३]

— <u>बम्बई के अहिन्दी भाषी पात्रों के वाक्य</u> :-

"साब दलिया बना दूँ।"

"बाई आपका फून है।"[४]

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.२३,९०।
२. - वही - - वही- - पृ.४४,४५,१२३।
३. - वही - - वही - - पृ.९,३०,३५,४३,४४,७२।
४. - वही - - वही - - पृ.३७,१२२।

५:३:९ युगीन विचारधाराओं के अनुकूल भाषा :-

देवेशजी के उपन्यासों में विविध विचारधारओं के सम्बन्ध में विचार व्यक्त करते समय तदनुरूप भाषा का प्रयोग मिलता है। देवेशजी का मूल स्वर समाज परख रहा है। जो कि साम्यवादी विचारधारा के अधिक निकट है। युगीन विचारधारा के "अन्ततः" उपन्यास में कुछ उदाहरण प्रयुक्त है -

"आज पूरा देश पंचवर्षीय योजनाओं की असफलताओं कस्बों और गाँवो में बढ़ती हुई जहरीली बदहाली और बेरोजगारी, मन्त्री से लेकर सन्तरी तक फैलते हुए भयावह भ्रष्टाचार और सीमा का अतिक्रमण करते हुए मूल्यों के -हास से पीड़ित है। इससे जनतन्त्र का पूरा ढाँचा ही हिलने लगा है।"[१]

"एयर रेड्स। पेट्राइट मिसाइलें। स्टड। तबाही। फौजें। सीमाएँ। विनाश। घोषणा। सुरंगे। युध्द के समाचार। पर्यावरण। महंगाई। शांति मिशन। गैस। कोयला। तेल का रिसाव।

राम जन्मभूमि-बाबरी मस्जिद बैंक ग्राउन्ड में चले गए हैं। भूमिगत।

बोफर्स का कहीं पता नहीं है।

बी.जे.पी दुखी है। चुनाव टलेंगे। रथयात्रा का फायदा नहीं मिल पायेगा।"[२]

इसतरह प्रस्तुत उपन्यास में विविध विचारधाराओं को विश्लेषित किया गया है। जिनमें देवेशजी की अपनी विचार दृष्टि भी परिलक्षित होती है। जो साम्यवादी विचार धारा के अधिक निकट प्रतीत होती है।

५:३:१० मनोवैज्ञानिक शब्दावली :-

प्रस्तुत उपन्यास में देवेशजीने स्त्री-पुरूष सम्बन्धों की जटिलता को महानगरीय परिवेश में मनोवैज्ञानिक ढ़ंग से प्रस्तुत किया है। अतः इसकी भाषा में मनोवैज्ञानिक शब्दावली

---

१. डॉ. देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.११३

२. - वही - - वही - - पृ.८४

का प्रचुर मात्रा में प्रयोग हुआ है। "अन्ततः" की वसुधा की मनश्चेतना में उठनेवाले विचारों को अभिव्यक्त करने के लिए इसका प्रभाव देखा जा सकता है। जैसे -

"तेरा अपना कुछ नहीं रहा। तू कूड़ा हो गयी सब कुछ होते हुए भी तू कचरा बन गयी।"[१]

"उसे लगता रहा था कि उसके पिंड में कालिमा का एक विशाल गोला उतर गया है और चेतना की रोशनी एक बारगी ही गायब हो गयी है कि जैसे उसके मन-प्राणों की शुभ्रता पर कोई कालिखा पुत गयी है.....।"[२] इन उध्दरणोंमे हीन भावना की शिकार वसुधा के वक्तव्य है, जिनसे उपन्यासांत में वे मुक्त हो जाते हैं। उसके मनोभावों का सफल मनोवैज्ञानिक चित्रण यहाँ झलकता है।

५:३:११ <u>व्यंग्यात्मक शब्दावली</u> :-

सामाजिक चेतना का प्रतिबध्द रचनाकार प्रचलित समाजव्यवस्था कभी पसंद नहीं करता। वह व्यवस्था के विरोध में आक्रोश करता है। तब उसकी भाषा का रूप व्यंग्यात्मक एवं पैना हो जाता है। शोषण, सामाजिक विकृतियाँ, विषमताऐं, परम्परागत मान्यताएँ एवं राजनितिक छलकपट पर व्यंग्यात्मक प्रहार किए है। कुछ उदाहरण -

> ".....कोई भी नेता लड़ता कब है। बस लड़वाता है।"[३]
>
> "जनवादी आकाओं का यह गिरोह मंच पर तो क्रान्तिकारी दिखता है लेकिन अपने ड्राइंग रूम और बैडरूम में यह घोर ब्राम्हणवादी और प्रतिक्रियावादी है।"[४]

५:३:१२ <u>छायावादी शब्दावली</u> :-

"अन्ततः" उपन्यास में कहीं-कहीं स्थलों पर छायावादी भाषा का रूप दृष्टिगत होता है। जैसे -

"यह जिन्दगी लकीरों से बनी शृंखला है। हर दिन एक लकीर कटती जाती है। कुछ लकीरों पर कोई कथा लिपटी होती है। लकीर कट जाती है लेकिन उससे लिपटी कथा

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.११७।
२. - वही - - वही - - पृ.९९।
३. - वही - - वही - - पृ.७६।
४. - वही - - वही - - पृ.११४।

आगे अनेक लकीरों तक बनी रहती है। ये कथाएँ.....ये प्रसंग....ये घटनाएँ.....। इनके घाव अंकित लकीर के गत हो जाने तक बने रहते है और जब तब टीस पैदा करते रहते हैं। पता नहीं, मेरी लकीरों की कथा का चरम बिन्दु क्या होगा।"[१]

इसतरह की छायावादी शब्दावली का सुन्दर चित्रण कई स्थलों पर मिलता है।

५:३:१३ पात्रानुकूल भाषा :-

पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग करना देवेशजी की विशेषता रही है। चरित्र विशेष के व्यक्तित्व को उभारने के लिए उन्होंने भाषा का सफल एवं सार्थक प्रयोग किया है। भाषा-प्रयोग और संवाद - पात्रों के अनुकूल है। नौकर की भाषा और पंकज पसरीचा की भाषा में अन्तर है। नौकर दानसिंह "साहब" के स्थानपर "जी साब" का प्रयोग करता है। बम्बई के अहिन्दीभाषी पात्रों की भाषा पर भी ध्यान दिया गया है -

"बाई आपका फून है।"[२]

"साब दलिया बना दूँ।"[३]

पसरीचा की भाषा बहुत ही परिमार्जित और प्रांजल है। राघवन तथा सुभाष की भाषाशैली उनके व्यक्तित्व के अनुरूप हल्के स्तर की है। वसुधा और शालिनी की भाषा शैली में भी निखार और प्रांजलता दिखती है।

५:३:१४ सीमाएँ :-

देवेश ठाकुर के उपन्यास "अन्ततः" में कुछ भाषा सम्बन्धी विसंगतियाँ भी उपलब्ध होती है। लेखक ने इन्हें जिन रूपों में प्रयुक्त किया है, वे प्रयोग सामान्यता उपलब्ध नहीं होते। ये प्रयोग मुख्यतः क्रियाओ के सन्दर्भ में है। जैसे-घुमड़न, फुसफुसता, बुदबुदाता है आदि क्रिया रूप तो करीब-करीब स्वीकृत हो चुके है, किन्तु कुछ क्रियाओं का प्रयोग पूर्णतः अप्रचलित

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.१३२।
२. - वही - - वही - - पृ.१२२।
३. - वही - - वही - - पृ.३७।

है। यद्यपि लेखक स्वयं इन प्रयोगों को उचित मानता है। जैसे -

"....बत्तियाँ चुपचाप रोशन है।"[१]

"....दीवाल घड़ी रात का एक बजने को है।"[२]

"....इस आभाव को कैसे पूरूँ।"[३] आदि।

५:३:१५ निष्कर्ष :-

निष्कर्षतः हम कह सकते है कि, प्रयोगशील उपन्यासकार देवेशजी की भाषा कथ्य के अनुरूप है। जिसके कारण शिल्प के स्तर पर उनका अपना सर्वथा नवीन एवं मौलिक महत्व है।

भाषा विषयानुकूल एवं पात्रानुकूल प्रवाहपूर्ण है। पात्र और परिवेश के अनुकूल शब्दों का प्रयोग है। उनकी विपुल शब्द राशि व्यावहारिकता, प्रसंगानुसार परिवर्तन क्षमता, सहज प्रवाह तथा चरित्रानुसार संवादों की गतिशीलता एवं नाटकीयता से अतीत को अंकित एवं अभीष्ट को सम्प्रेषित करने में समर्थ रही है। देवेशजी द्वारा निर्मित नये विशेषणों, उपमानों, रूपकों, प्रतीकों, बिम्बों के शब्दों में जीवन की विसंगतियों को प्रभावोत्पादक ढ़ंग से व्यक्त करने की क्षमता है। सहायक क्रियांओं से रहित छोटे-छोटे सरल वाक्यों का कुशलतापूर्वक प्रयोग किया है।

देवेशजी की भाषा दैनिक व्यवहारकी स्वाभाविक एवं संवेदनशील भाषा है जिसमें लयात्मकता, बिम्बात्मकता एवं चुटीलापन है। अनुभव के मोती सुक्तियों के रूप में प्रयुक्त होकर भाषा को आकर्षक और प्रभावी बना देते हैं। "अन्ततः" उत्कट अनुभूति की सफल अभिव्यक्ति है। उनकी मनोवैज्ञानिक शब्दावली से हमे यह ज्ञात होता है कि, लेखक को मानव हृदय की भावनाओं की सूक्ष्म जानकारी है जिसके कारण वह मानव मन के रहस्यों को सशक्त भाषा में अभिव्यक्त करने में सफल हुए है।

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.१९
२. - वही - - वही - - पृ.११०
३. - वही - - वही - - पृ.२८

विविधताओं से युक्त भौतिकवादी जीवन के विविध आयामों को यथार्थ के धरातल पर सफल अभिव्यक्ति दी है। लेखक की भाषा में सहज प्रवाह है। बिखरे टूटे वाक्य जिन्दगी के बिखराव और टूटन को अभिव्यक्त करने में विशेष प्रभावशाली बन पड़े है। जहाँ उपन्यास की भाषा में इतना वैशिष्टय है, इतनी शक्ति है वहाँ उसकी एक सीमा भी है। वह सीमा है, अंग्रेजी भाषा का बेझिझक प्रयोग। अतः अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग आवश्यकता से अधिक हुआ है। यह लेखककी मजबूरी है,क्योंकि आजकल पढ़े-लिखे लोगों के बीच वार्तालाप में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग एक फैशन सा हो गया है। जिसका प्रमाण आजकल के बुध्दिजीवी मध्यवर्गीय जीवन में अक्सर मिलता है। अतः आधुनिक विचारों के प्रभाव के कारण और वहाँ उसकी आवश्यकता को महसूस करके ही लेखक ने अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग किया है।

समग्रतः देवेशजी की भाषा में कथ्य को सार्थक एवं प्रभावपूर्ण रूप में संप्रेषित करने का सामर्थ्य है।

५.४ <u>शैली</u> :-

५:४:१ <u>स्वरूप निरूपण</u> :-

मनुष्य में सौन्दर्य की भावना जन्मजात होती है। वह अपने चारों ओर सौन्दर्य का आगाध कोष विकीर्ण हुआ देखना चाहता है और उसी की प्रतिक्रिया को भाषा के माध्यम से सुन्दरतम अभिव्यक्ति में व्यक्त करने की इच्छा रखता है। शैली इसी इच्छा की पूर्तिका साधन है।

अभिव्यक्ति का मूल माध्यम शैली है। जिसके अभाव में साहित्य के अस्तित्व की कल्पना ही नहीं की जा सकती। इसीलिए विद्वानोंने शैली को लेखक के व्यक्तित्व का अभिन्न अंग माना और लिखा भी है- "style is the man itself" शैली ही वह प्रमुख तत्व है जो उपन्यास लेखकों को परस्पर अलग रखती है।

शैली भाषा में सौन्दर्य और प्रभाव उत्पन्न करती है। शैली रचना के केवल बाहयरूप को ही अलंकृत नहीं करती, उसके आन्तरिक पक्षका भी विकास करती है। वही लेखक सफल

होता है जिस की शैली सबल होती है। इसी लिए तो "शैली का संबंध रचना के साथ-साथ रचनाकार से भी होता है। इसलिए रचनाकार का परिवेश, अनुभव, शिक्षा, संस्कार, रूचि आदि का भी उसमें विशेष महत्व होता है। शैली में लेखक का व्यक्तित्व अन्तर्निहित रहता है। अतः स्पष्ट है कि शैली एक कलात्मक उपलब्धि है, जो प्रतिभा की तरह अनायास प्राप्त नहीं होती। उसे अर्जित करना पडता है।"[१] हिन्दी साहित्य के प्रारंभिक उपन्यासों में वर्णनात्मक शैली प्रचलित थी। आज उपन्यास के क्षेत्र में अनेक शैलियाँ प्रचलित रही हैं।

वस्तुतः किसी भी औपन्यसिक रचना में किसी एक ही शैली का प्रयोग नहीं होता। कथ्य की माँग के अनुसार उपन्यासकार विविध शैलियों का प्रयोग करता है। रचनाधर्मी उपन्यासकार डॉ.देवेशजी का "अन्ततः" उपन्यास समन्वित शैली में लिखी अनुठी रचना है।

५:४:२ <u>शैली के विविध प्रकार</u> :-

"अन्ततः" में प्रयुक्त प्रमुख शैलियों का विवेचन इसप्रकार है —

५:४:२:१ मनोविश्लेषणात्मक शैली।

५:४:२:२ नाटय शैली।

५:४:२:३ संवाद शैली।

५:४:२:४ विवरणात्मक शैली।

५:४:२:५ विश्लेषणात्मक शैली।

५:४:२:६ पूर्व-दीप्ति शैली।

५:४:२:७ चेतना प्रवाह शैली।

५:४:२:८ आत्मकथात्मक शैली।

५:४:२:९ पत्रात्मक शैली।

५:४:२:१० डायरी शैली।

५:४:२:११ सांकेतिक शैली।

---

१. डॉ.पी.एस.पाटील : "देवेश ठाकुर और उनका उ.साहित्य" - पृ.३०२

५:४:२:१२ प्रतीकात्मक शैली।

५:४:२:१३ व्यंग्यात्मक शैली।

५:४:२:१४ दृश्य शैली।

५:४:२:१५ विसादृश्य शैली।

५:४:२:१६ एकालाप शैली।

५:४:२:१७ सिनेरिया शिल्प।

५:४:२:१८ निष्कर्ष।

५:४:२:१ मनोविश्लेषणात्मक शैली :-

मनोविश्लेषण वस्तुतः विश्लेषणात्मक शैली का एक आयाम है। "मनोविश्लेषण एक विशेष युक्ति है जिसके द्वारा अज्ञात मन के अन्दर स्थित द्वन्द्व एवं भावना ग्रन्थियों की जानकारी प्राप्त की जाती है।"[१] "अन्ततः" का शैली-शिल्प कुल मिलाकर और प्रमुखतः मनोविश्लेषणात्मक पध्दति पर ही आधारित है। देवेशजी के मनोवैज्ञानिक अध्ययन की गहनता का पृष्ठ-पृष्ठ पर अनुभव कराती है। पसरीचा की मनःस्थिति का करूणापूर्ण चित्रण इसप्रकार हुआ है -

"काश, इतना भावुक और संवेदनशील न होता यह मन। जिन्दगी कितनी अलग होती। एक अलक्षित यात्रा। यात्राओं की यातना। पता नहीं, ये यातनाएँ कब समाप्त होंगी। और साँसों की यह डोर। कभी कितनी मजबूत लगती है, और कभी कितनी कमजोर....। एक बयार बहती है, कली को चूमती है और उसे खिलाकर फूल बना देती है। एक हवा चलती है पतझर की, फूलों की पंखुरियाँ क्या पत्तिया तक झड़ जाती है। सूखी डालें अपनी नग्नता में खड़ी रहती है - वर्षा की अमृत बुँदों की आशा में। आशा। प्रत्याशा आश्वस्ति। कितने-कितने शब्द है। लेकिन कोई भी तो मन को पूरा नहीं कह पाता....। एक विवशता के बीच जीना होता है कभी-कभी और कभी यह विवशता की कड़ियाँ इतनी लम्बी हो जाती है, लगता है, यही तो जिंदगी है। एक तड़पती, समय के बहाव में बहती जिंदगी....।
एक ओर से अनंत छोर तक बहती जाती हुई।"[२]

---

१. डॉ.ममता शुक्ला : "मन्नू भंडारी के कथासाहित्य का मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन"- पृ.२०
२. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.९२

इसप्रकार के मनोविश्लेषणात्मक स्थलों से पूरा उपन्यास भरा पड़ा है और यही इसके समुचे विधान के प्राण भी है। मनोविज्ञान के चितेरे देवेशजी ने महानगरीय परिवेश में स्त्री-पुरूष संबंधोंको सहज मनोविश्लेषण के आधार पर ही प्रस्तुत किया है।

५:४:२:२ <u>नाटय शैली</u> :-

नाटको जैसा प्रभाव डालने एवं गति की तीव्रता लाने के लिए उपन्यासकार इस शैली का प्रयोग करते है। इसमें पात्रों को अपने कार्यों और कथनी द्वारा कथा को आगे बढाने का अवसर मिलता है। "अन्ततः" में कई स्थलों पर वसुधा एवं पसरीचा के आत्मकथन एवं उनके पत्रों के माध्यम से इस शैली का विकास हुआ है। इन दोनों की तथा राघवन की क्रियाशीलता को उपन्यासकारने नाटकीयता प्रदान की है।

"अन्ततः" में अनेक स्थलों पर पात्रों के संवादों के माध्यम से नाटकीय प्रवाह उत्पन्न किया गया है। जैसे -

— "....अगर तुम मेरी बात को अपनी पर्सनल लाइफ में दखल देना न समझो तो तुमसे कुछ कहूँ....?"

— "सच्चे वेलविशर इसतरह से किसी का पीछा नहीं करते। मैं इसे घटियापन कहता हूँ...।"

— "मुझे खुद ताज्जुब हो रहा है सर....।"

— "लेकिन मुझे नहीं हो रहा। यह बहुत स्वाभाविक है।

— "क्या.....।

— "अगर कोई इन्सान अपनी चीज छिनते देखता है तो वह किसी भी स्तर पर उतर सकता सकता है। राघवन ने तो अभी शुरूआत ही की है....।

— "मैं समझी नहीं.....।"[१]

राघवन और वसुधा के संवादों में भी नाटकीयता देखी जा सकती है —

— "और मिस्टर पसरीचा कैसे है?"

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ. ७२

— "बहुत अच्छे है....।"

— "दिल्ली से लौट आए हैं क्या?"

— "वहाँ से तो पिछले हप्ते ही आ गए थे।"

— "वो दिन तो तुम्हारे बहुत अकेले बीते होंगे।"

— "मैं समझी नहीं।"

— "तुम इतनी नासमझ तो नहीं हो....।"

— "सच ? तुम्हें पता है....? अगर मैं इतनी समझदार होती तो.....।"

— "तो क्या होता.....।"

— "तो शायद तुम इस वक्त यहाँ नहीं होते....।"

— "क्या मतलब.....?"

— "तुम इतने नासमझ तो नहीं हो मिस्टर राघवन.....।"[१]

इसतरह देवेशजी नाटयशैली के चित्रण में सफल हुए है।

५:४:२:३ <u>संवाद शैली</u> :-

नाटय शैली की सार्थकता छोटे-छोटे एवं सहज, स्वभाविक संवादों के माध्यम से ही सम्भव है। "अन्ततः" उपन्यास की विशेषता यह है की पूरा उपन्यास संवाद शैली में ही विकसित हुआ है। इसमें संवादों का सार्थक एवं सफल उपयोग हुआ है। संवाद मुख्यतः वैयक्तिक जीवन से सम्बन्धित समसामयिक संदर्भो से संपृक्त पारिवारिक समस्याओं, व्यक्तिगत समस्याओं, आपसी कलह आदि विषयों से सम्बन्धित है। यह समसामायिक परिस्थितियों के विश्लेषण में सम्पूर्ण व्यवस्था के संबंध के प्रति आक्रोश प्रकट करते है। यह संवाद विविध रूपों में दृष्टिगत होते हैं। इनमें कही एकालाप का प्रयोग हुआ है। तो कहीं एकपक्षीय टेलिफोनिक संवादों के एकपक्षीय होते हुए भी लेखक स्थिति और अर्थ को पूरी तरह व्यक्त करने में सफल रहा है। जैसे -

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.८१

— "हॅलो....।....नमस्कार सर.....।

— ".....।"

— "नहीं तो। अब मैं बिल्कुल ठीक हूँ।"

— "......।"

— "जी हाँ, मैं ऑफिस आ रही हूँ।"

— "......।".....

— "थैंक्यू सर। नमस्ते.....।"[१]

कहीं कहीं वैयक्तिक जीवन से सम्बन्धित तात्विक चर्चावाले एवं स्वभाव-वैषम्य आदि से सम्बन्धित संवाद है। इस संदर्भ में प्रस्तुत अंश द्रष्टव्य है -

— " मैं कुछ भी नही भूली हूँ। लेकिन तुम्हारा बिहेवियर बहुत....।

— "क्या है मेरे बिहेवियर में ?

— "बताऊँ, तो बुरा नहीं मानोगे....?"

— "तुम बोलो तो....।"

— "छोडो....। चाय पियोगे ?"[२]

इसतरह संवादों के माध्यम से पात्रों के स्वभाव का परिचय मिलता है।

५:४:२:४ <u>विवरणात्मक शैली</u> :-

यह शैली परम्परागत मानी गयी है। इसमें किसी भी दृश्य या पात्र का सरल और सीधे-साधे ढंग से वर्णन किया जाता है। पात्रों की परिस्थितियों एवं उनके परिवेश के चित्रणद्वारा सम्पूर्णता का आभास दिलाने में यह शैली उपयुक्त होती है। "बाहय दृश्यों और घटनाओं को इस शैली में प्रस्तुत करके यथार्थ का सम्यक बोध भी कराया जाता है।"[३] "अन्ततः" में विवरण शैली का सफल प्रयोग किया है। इसके माध्यम से पात्रों के सूक्ष्म क्रियाकलापों, चेष्टाओं तथा मनःस्थितियों के अनुरूप परिवेश-चित्रण में देवेशजी सफल हुअे है। इस शैली

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.१२२

२. - वही - - वही - - पृ.८१

३. प्रो.सतीश पाण्डये : "कथाशिल्पी देवेश ठाकुर" - पृ.११३

की सार्थकता इसके सप्रयोजन एवं प्रासंगिक होने में निहित है। "अन्ततः" की वसुधा तथा पसरीचा के चित्रण में उनकी विवशताओं, व्यथाओं तथा अकेलापन वर्णित हुआ है। वसुधा की मनःस्थिति के अनुरूप बाहय परिवेश का दृश्य सुंदर बन पडा है - "खिडकी खुली है। बाहर मध्यम प्रकाश है। हवा में प्रवाह है। बत्तियाँ चुपचाप रोशन हैं। शेष शांति है। खालीपन और आकुलाहट से भरी शांति। नहीं यह शान्ति नहीं, सूनापन है। बाहर का सूनापन और भीतर का भी।"[१]

"उसने बाहर की ओर देखा। सामने का समुद्र दूर तक दिखाई पड़ने वाला बंजर लग रहा था। डूबती उतराती नावें सफेद कब्रगाहों सी लग रही थी। एक सन्नाटा उसके भीतर चीखने लगा था। जिंदगी जैसे एक सवाल बनकर उसके सामने खड़ी हो गयी थी।"[२]

"वसुधा भीगे हुए मरीन ड्राइव को देखे जा रही है।....रात भर बारिश होती रही है। अब इस वक्त सब कुछ गीला-गीला और ठंडा-ठंडा सा है। समुद्र का पानी गंदला गया है। दूर, एक नौका दिख रही है। शेष, सर्वत्र शांति है। बाहर भी और भीतर भी।...उसका हृदय खुला है और कहीं दूर से आती सौंधी गंध उसके मन-प्राणों को वृन्दावन-सा पावन बना रही है। अपनी विगत मूर्खताओं पर उसे हँसी आ रही है।"[३]

इसप्रकार लेखक ने वसुधा के मन की उथल-पुथल का संकेत देने के विशिष्ट उद्देश्य से अनेक स्थलोंपर बाहय वातावरण का सफल चित्रण किया है।

५:४:२:५ <u>विश्लेषणात्मक शैली</u> :-

विचारों के विश्लेषण के लिए उपन्यास में यह शैली अनिवार्य होती है। विश्लेषणात्मक शैली में उपन्यासकार पात्रों के चेतन या अचेतन विचारों की प्रक्रिया को अभिव्यक्ति देने का

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.१९।
२. - वही - - वही - - पृ.१०३
३. - वही - - वही - - पृ.१४७

प्रयास करता है। इसके माध्यम से घटनाएँ, परिस्थितियाँ तथा पात्रों के कार्यों के मूल में स्थित कारण स्पष्ट हो जाते हैं। आधुनिक उपन्यास में "विश्लेषणात्मक शैली अनेक रूपों में विकसित हुई मिलती है जिनमें से प्रमुख मनोवैज्ञानिकता युक्त विश्लेषणात्मक पध्दति, बौध्दिकता युक्त विश्लेषणात्मक पध्दत्ति, यथार्थपरक विश्लेषणात्मक पध्दति आदर्श से आगृहीत विश्लेषणात्मक पध्दत्ति आदि है।"[१] देवेश ठाकुर के उपन्यासों में इस शिल्प-विधि का प्रयोग विविध रूपों में अत्यन्त ही व्यापक पैमाने पर हुआ है। "अन्ततः" की वसुधा समाज के दायरों एवं मध्यवर्गीय संस्कारों में जकड़ी है। वह अपने और अतुल के उच्चवर्ग को लेकर द्वन्द्व में रहती है। "अतुल के वर्ग और वैभव से उसकी कोई तुलना नहीं हो सकती थी।...लेकिन क्या वह अतुल के समाज और समाज की अपेक्षाओं पर पूरी उतर सकेगी...?"[२]

सामाजिक दायरों में फँसी वसुधा का मन व्यवस्था के प्रति आक्रोश करता है- "औरत, मुझ जैसी आधारहीन औरत अकेली नहीं रह सकती। यह व्यवस्था ही कुछ ऐसी है। अकेली औरत को सब दबोच लेना चाहते हैं। सब कोई, जिसे भी मौका मिल जाय। सब मौके की तलाश में रहते हैं।"[३]

वसुधा के मन की यह हीन भावना तथा विवशता उसके मध्यवर्गीय संस्कारो एवं परिवेश के ही परिणामस्वरूप दिखाई देती है। परिस्थितियोंसे जूझती हुई वसुधा अपने संस्कार तथा परिवेश के प्रति भी आक्रोश प्रकट करती हुई कहती है - "संस्कार और परिवेश ही ऐसा रहा है मेरा, जहाँ कभी मैंने अपने लिये कोई निर्णय नहीं लिया। दूसरे निर्णय सुनाते रहे और मैं उन निर्णयों के इशारे पर चलती रही। मेरी जिन्दगी दूसरे जीते रहे और मैं चुप बनी रही। इसी चुप्पी ने मुझे इस चौराहे पर खडा कर दिया है कि जहाँ मै अपने अन्तर्द्वन्द्वों में पिसती हुई, कण-कण, क्षण-क्षण मिट्टी हो रही हूँ।"[४]

इसप्रकार देवेश जी प्रस्तुत उपन्यास में विश्लेषणात्मक शैली को अत्यन्त ही प्रभावशाली ढ़ंग से प्रयुक्त किया है।

---

१. डॉ.प्रतापनारायण टंडन : "उपन्यास कला" - पृ.२६५
२. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ. ६४
३. - वही - - वही - - पृ.११०
४. - वही - - वही - - पृ.१११

५:४:२:६ पूर्व-दीप्ति शैली :-

पूर्व-दीप्ति शैली या "फ्लॅश-बैक" शैली में जीवन की घटनाओं का वर्णन स्मृति के रूप में होता है। इसमें वे ही घटनाएँ आती हैं, जो वर्तमान की किसी घटना अथवा स्थिति विशेष को सार्थक बनाने में सहायक होती है। ये घटनाऐं पात्र के अतीत के जीवन से सम्बन्धित होती है। अतः पात्रों के मस्तिष्क में उठनेवाली स्मृति तरंगो के माध्यम से अभिव्यक्त होने के कारण कथा में कोई निश्चित क्रम नहीं होता। जीवन के महत्वपूर्ण क्षण में स्मृति-तरंगों के माध्यम से अतीत की घटनाओं के अन्धकार को लिपिबध्द करके दीप्त किया जाता है।"[१]

इससे अतीत के स्मृत्यावलोकन से वर्तमान स्थितिके विवेचन का अवसर मिल जाता है। इस पध्दुत्ति का सबसे बड़ा दोष यह है कि, कथावस्तु की समग्राता में संतुलन का अभाव खटकने लगता है, फिर भी इस शैली से मनोवैज्ञानिकता बढती है। अतः मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में पूर्व-दीप्ति शैली का विशेष उपयोग होता है।

देवेश ठाकुर द्वारा इस शैली का "अन्ततः" में सफल प्रयोग हुआ है। इसमें वसुधा तथा पसरीचा के अतीत जीवन के विभिन्न दृष्यों की अभिव्यक्ति ही हुई है। इन अतीत की स्मृतियों का वर्तमान की घटनाओं से सीधा संबंध होता है। इसके उदाहरण हमें प्रस्तुत उपन्यास के अतीत-१, अतीत-२ और स्मृतियाँ शीर्षक में मिलते हैं। जैसे - "लेकिन बीस साल पुराना वह प्रसंग। कभी छाती पर गड़ जाता है कील की तरह। कभी दिमाग पर पड़ता है हथौड़े की मार-सा। पंकज उस मार को आज तक नहीं भुला सके है।"[२] "पसरीचा देखे जा रहे हैं। अतीत फिर गिलास के सुनहरेपन में उभरने लगा है। और साथ ही उस शरद की संध्या के संवाद भी....."मे आई कम इन सर....। एस... "[३] "वसुधा याद करने लगती है, आज कौन-सी तारीख है। २० मार्च १९८८ मार्च के बाद अप्रैल और फिर मई। मई की ८ तारीख। ८ मई को तीन साल हा जाएँगे। इस अकेलेपन की तीसरी साल गिरह।"[४]

---

१. प्रो.सतीश पाण्डये : "कथाशिल्पी देवेश ठाकुर - पृ.१२२
२. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.२१
३. - वही - - वही - - पृ.२२
४. - वही - - वही - - पृ.२४

वसुधा ने डायरी खोली और उसके पन्ने पलटने लगी....। एक पृष्ठ को पलटते-पलटते वह रूक गयी....। उसकी आँखों के सामने कुछ शब्द स्पष्ट होने लगे। वह उन्हें जीने लगी.... कल दिन भर बरसात होती रही।....आकाश से बरसता हुआ बादल और अमृत नहायी धरती।"[१]

५:४:२:७ <u>चेतना-प्रवाह शैली</u> :-

प्रस्तुत शैली में मानवजीवन के आंतरिक यथार्थ का चित्रण होता है। बाहर को दिखाई देनेवाली हलचल के पीछे स्थित चेतनमन की सूक्ष्म स्थितियाँ एवं संवेदनाएँ इसमें शब्दबध्द की जाती है। अतः इस में छोटी छोटी सुप्त भावनाएँ चित्रित होती है। हृदय की प्रत्येक धडकन का भाव घनत्व के उत्थान-पतन का स्पष्ट चित्रण होता है।

"अन्ततः" में पात्रों के तीव्र अन्त-संघर्ष को अत्यन्त ही मार्मिक ढ़ंग से चित्रित किया है। वसुधा का मन निरन्तर अस्थिर रहता है। वह वर्तमान में विचरण करती हुई भी कभी कभी अतीत की ओर मुड़ती है, तो कभी भविष्य की ओर। राघवन के साथ पिक्चर हॉल में बैठी "वसुधा के भीतर अतीत की रीलें चलने लगी है। अतुल के साथ वह कितनी बार इस हॉल में बैठी है। तब मन कितना खिला रहता था। कितना चाहती थी वह, अतुल उससे छेड़छाड़ करे। लेकिन अतुल अनुशासित बच्चे की तरह स्क्रीन पर देखता रहता था।"[२]

पसरीचा अपने अतीत से भयभीत है फिर भी सोचते हैं। वे महसूस करते हैं - "उनका सब कुछ सोख लिया गया है। मन भी। तन भी इच्छा आकांक्षाएँ भी.....

फिर भी प्रतीक्षा है -
किसी बदली के घुमड़ने की।
सुखी धरती पर हलकी-सी बौछार की।
रस-गंध-गुण भीगे किसी परिचय की।

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.२६

२. - वही - - वही - - पृ.५४

एक परिचय, जो सालों पहले हुआ था, - कब का टूट - छितरा चुका है।
पूरा घरौंदा बना भी नहीं था कि अंधड ने सब तहस-नहस कर डाला।
तब से पसरीचा भयभीत रहते है।.....।
पद्मा आँधी बन कर आई थी और सैलाब बनकर चली गयी।"[१]

वसुधा कई बार अपने अतीत में खो जाती है और सोचती हैं -

"अतुल का प्यार। अतुल की विवाह-पूर्व की कसमें। अतुल की योजनाएँ। उसकी महत्वाकांक्षा। बहुत-बहुत सम्पन्न बनने का उसका सपना। और फिर उसकी महत्वाकांक्षा। बहुत-बहुत सम्पन्न बनने का उसका सपना। और फिर उसकी व्यस्तता। वसुधा का अकेलापन। एक उपेक्षित जिन्दगी।"[२]

इसप्रकार देवेशजी ने पात्रों के मस्तिष्क में चल रही भावनाओं को सूक्ष्म धरातल पर चित्रित करने के लिये प्रस्तुत उपन्यास में इस शैली का उपयोग किया है।

५:४:२:८ <u>आत्मकथात्मक शैली</u> :-

"उत्तम पुरूष अथवा प्रथम पुरूषकी ओर से जो कथा प्रस्तुत की जाती है उसे हम आत्मकथात्मक शैली के अर्न्तगत रखते हैं।"[३] आत्मकथात्मक पध्दुत्ति मुख्य रूप से आत्मविश्लेषण के आधार पर विकसित हुई है। इस शैली की सबसे बड़ी विशेषता यह होती है कि इसमें लेखक और पाठक में पर्याप्त निकटता रहती है। इसमें घटनाओं की अपेक्षा व्यक्ति को अधिक महत्व दिया जाता है। उपन्यासकार स्वयं कथा के किसी महत्वपूर्ण पात्र का स्थान गृहण करके पाठक से प्रत्यक्षतः उसका वर्णन करता है, इसलिए इसमें प्रभावात्मकता भी अधिक आ जाती है। यह शैली उत्तम पुरूष "मैं" के माध्यम से विकसित होने के कारण आत्मविश्लेषण एवं आत्मपरिक्षण की दृष्टि से अत्यंत अनुकूल होती है।

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.३५

२. - वही - - वही - - पृ.५८

३. डॉ.प्रतापनारायण टंडन : "हिन्दी उपन्यास कला" - पृ.२६७

"अन्ततः" उपन्यास की वसुधा द्वारा लेखक ने मध्यवर्गीय नारी के मन की विवशताओं, कमजोरियों और उलझनों को चित्रित किया है। इसमें ऊपर से तटस्थ दिखाई देनेवाले पसरीचा की मूक विवशता का भी चित्रण हुआ है। उपन्यास के कई पृष्ठोंपर उनके आत्मविश्लेषण का ही चित्रण हुआ है।

वास्तव में इस शैली का "मैं" अन्य पात्रों को उनकी परिस्थितियों में रखकर उनका विश्लेषण नहीं कर पाता। इसके अतिरिक्त "मैं" के प्रति अन्य पात्रों के क्या विचार है यह बात भी स्पष्ट नहीं होती।

उपर्युक्त दोषों का निवारण उन आत्मकथात्मक उपन्यासों में हो जाता है जो विभिन्न पात्रों के दृष्टिकोणों से लिखे गये होते हैं। आजकल आत्मकथात्मक उपन्यास तीन प्रकार के लिखे जाते हैं।

(१) सम्पूर्ण कथा कथानायक के माध्यम से व्यक्त होती है।

(२) दो-चार पात्रों का सृजन करके उपन्यास की कथा का सारा सूत्र उन्हीं के हाथ में उपन्यासकार सौंप देता है। ये पात्र क्रमशः अपनी अपनी कथा कहते जाते हैं।

(३) अधिकांश कथा तो प्रधान पात्रद्वारा कहीं जाती है, किन्तु अन्य पात्रों के जीवन, तथ्य और घटनायें अन्य पात्रों द्वारा वर्णित होती है। "अन्ततः" इसप्रकार की रचना है।

इसप्रकार देवेशजी के उपन्यासों में आत्मकथात्मक शैली का प्रयोग अनेक रूपों में सुन्दर ढ़ंग से और सफलता के साथ हुआ है।

५:४:२:९ <u>पत्रात्मक शैली</u> :-

पत्रात्मक शैली के रूप में लिखित उपन्यास में कथा की योजना का आधार विविध पात्रों के द्वारा अपने आत्मीय जनों को लिखे गए पत्रों के माध्यम से होता है।

पत्रशैली में आत्मकथात्मक शैली तथा डायरी शैली की भाँति ही प्रत्यक्ष रूप से आत्माभिव्यक्ति होती है, जिसमें चरित्रों के सूक्ष्म मनोभावों का बड़ा ही अंतरंग चित्रण होता है।

पात्र के हृदय में होनेवाली हलचल तथा पात्रों के मन की गूढ़तम बातों को सुगमता से व्यक्त करता है। अंतरंग लोगों को पत्र लिखने के कारण पत्र-लेखक किसी प्रकार का दुराव-छिपाव नहीं रखता। निःसंकोच रूप से मनोभाव प्रकट कर देता है। इस शैली में लिखे गए पत्र एक ही पात्र के धारावाहिक पत्र होते है तो कभी अनेक पात्रों द्वारा लिखे गए अनेक पत्रों के माध्यम से कथा विकसित होती है। इससे उपन्यास के प्रत्येक पात्र के चरित्र पर अलग-अलग दृष्टियों से प्रकाश पडता है। पत्रात्मक शैली के कारण कथा की संकीर्णता कुछ मात्रा में कम हो जाती है।

देवेशजी ने "अन्ततः" में इस शैली का प्रयोग उचित ढ़ंग से किया है। व्यक्तिगत समस्याओं को एक दुसरे के सामने प्रस्तुत करने के लिए वसुधा और पसरीचा ने एक दुसरे को पत्र लिखे है। वसुधा जिन तथ्यों को प्रत्यक्षतः व्यक्त नहीं कर सकी थी, उन्हें पत्र में व्यक्त कर देती है। दूसरा पत्र पसरीचा का है, जिसमें उनके मन की उमड़ती भावनाओं को अभिव्यक्ति मिली है।

वसुधा के पत्र में विवशताओं एवं समस्याओं के साथ साथ बुध्दिगत विचार भी प्रकट हुए है। जैसे - "दर्शन कहता डैथ-जीवन-दृष्टि को व्यापक बनाओ। स्थूल आकर्षण को छोड़ो। चिंतन की आदत डालो। स्वकेन्द्रित मत बनो। लेकिन स्थूल जगत में जीते हुए हर क्षण, हर पल तो ऐसा नहीं किया जा सकता न।....चिंतन, इस उम्र में मुझ जैसे साधारण जीव को जल्दी थका देनेवाला होता है।.....अपने को जिंदा रखने के लिये भावना का स्त्रोत आवश्यक होता है। वह कहाँ से लाऊँ ?"[१]

इसीतरह पसरीचा ने वसुधा की झिझक को दूर करने के लिए संस्कार, मूल्यों और मर्यादाओं पर अपना गहरा विचार प्रकट किया है। वसुधा को लिखे पत्र में कहा है - "अपने मूल्य और अपनी मर्यादाएँ - सबको व्यक्ति अपनी जरूरतों के अनुसार ही बनाता है।

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.१११

मैंने मूल्यों और मर्यादाओं के खण्डन की बात नहीं की है। तुमने गलत समझा या यों कहूँ कि तुम मुझे ठीक से समझ नहीं पायी। मैंने अपनी जरूरत के अनुसार अपने मूल्य और मर्यादाएँ निश्चित की है। वे न तो समाज विरोधी है, न व्यक्ति विरोधी। "....रास्ते में रोढों की तरह आनेवाले संस्कारों को हटाना पडता है और उनकी जगह नयी मान्यताओं को जगह देनी पडती है।"[१]

इसप्रकार "अन्ततः" में लिखे पत्रों में गम्भीर एवं सुलझे हुए विचार प्रकट हुए है। देवेशजी ने पत्रों के माध्यम से टूटी हुयी कड़ियों को जोडा है और कथा को एक निश्चित गति और दिशा दी है। अतः शिल्प की दृष्टि से पत्रात्मक शैली को एक नया आकर्षण पैदा हुआ है।

५:४:२:१० <u>डायरी शैली</u> :-

"डायरी शैली मुख्यतः प्रथम पुरूष के रूप में मिलती है, भले ही एक या अधिक पात्रों की डायरी उपस्थित की जाय। डायरी के माध्यम से उपन्यासकार अपनी कृति के किसी पात्र अथवा किन्हीं पात्रों के जीवन के विविध क्षेत्रीय विवरण उपस्थित करता है।"[२] यह शैली पात्रों की गतिविधि, उनके कार्य-कलाप में तथा उनके चारित्रिक स्पष्टीकरण के लिए उपयोगी होती है। डायरी लेखक अपने जीवन की कतिपय घटनाओं की प्रतिक्रिया ही अंकित करता है। अतः उसका क्षेत्र भी कुछ हद तक सीमित होता है। इसमें जीवन की महत्वपूर्ण घटनाओं और अन्त-संघर्षका चित्रण होता है। अतः यह शैली मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के लिए अधिक उपयुक्त होती है, किन्तु इसमें अन्य तत्वों का विकास स्वाभाविक रूप में नहीं हो पाता। कथाविकास भी स्वाभाविक रूप में नहीं हो पाता। फिर भी डायरी शैली का उपयोग पात्र की मनःस्थिति के विश्लेषण के लिए होता है।

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.१२९

२. डॉ.प्रतापनारायण टंडन : "हिन्दी उपन्यास कला" - पृ.१७२

"अन्ततः" में डायरी शैलीद्वारा वसुधा तथा पसरीचा की जिन्दगी का, उसके अन्तर्मन, की उथल-पुथल का सुन्दर चित्रण अंकित किया गया है। अतीत में खोयी वसुधा के प्यार को अभिव्यक्ति देने के लिए डायरी शैली का सही उपयोग किया। पसरीचा भी अपने मनोभावों को डायरी में अभिव्यक्त करते हैं। अतः इसके माध्यम से स्त्री-पुरूष सम्बन्धों, नारी की विवशता एवं प्यार जैसे विषय प्रकट हुए है। डायरी के पृष्ठों को २९ दिसम्बर, ९ जनवरी १९८६ शीर्षक देकर समय का उल्लेख किया है। अतः देवेशजी के "अन्ततः" उपन्यास में डायरी-शैली का सार्थक उपयोग किया है। यह बड़ा ही शालीन, सहज स्वाभाविक एवं गम्भीर बन पडा है। "स्व" की अभिव्यक्ति तो डायरी शैली में हुई ही है, पर उसकी मूल प्रेरणा भावनाओं के अन्य पात्रों तक सम्प्रेषित करने में ही अन्तर्हित है।

५:४:२:११ <u>सांकेतिक शैली</u> :-

कतिपय संकेतों के माध्यम से उपन्यासकार दृश्य घटना अथवा परिस्थिती का विशद एवं सुन्दर चित्र अंकित करता है। जो सांकेतिक शैली कहलायी जाती है। वर्णनात्मक शैली के प्रतिकूल इस शैली को माना जाता हे। "अन्ततः" उपन्यास में अनेक स्थलोंपर घटनाओं या परिस्थितियों को सांकेतिक शैली में प्रस्तुत किया है। जैसे - "दिन भर की व्यस्तता है। औपचारिक दोस्तियाँ। खोखली हँसी। दिखावे का अपनापन। बाँसी हँसी-मजाक। समय बितानेवाले वादविवाद। तर्कवितर्क।....पद। मान। प्रतिष्ठा। स्वीकृति। आयोजन। गोष्टियाँ। मीटिंगे हवाई यात्राएँ। देश-विदेश। होटल। रेस्तराँ। फाइवस्टार। ए ग्रेड।"[१]

वसुधा के मन में अतुल के प्रति उठ रहे मनोभावों के चित्रांकन में, सांकेतिक शैली का सुन्दर निर्वाह हुआ है - "अतुल का गरिमामय दृढ़ व्यक्तित्व। उसकी सम्पन्नता। उसका बाँकपन उसके खुले इजहार। रात-रात उसका वसुधा के सपनों में आना उसकी चुहल। उसके हँसी-मजाक....।"[२]

---

१. डॉ. देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.२०

२. - वही - - वही - - पृ.६४

"अन्ततः" में पंकज पसरीचा और पद्मा के वैवाहिक सम्बन्ध का सांकेतिक वर्णन लेखक ने किया है। "पद्मा का खिलाखिलाता चेहरा। पद्मा की किटी पार्टीयाँ। पद्मा के मित्र, होटल।.....शॉपिंग। टाइम काटने के लिए....। ....सस्ते नावेल ....ब्यूटिशियन का बिल। .....साडियाँ। .....आधी रात की वापसी।....दरवाजे की घंटी का बजना। ....पसरीचा जगे हुए है।"[१]

देवेश ठाकुर ने इस शैली का उपयोग सार्थक ढंग से किया है। जिससे उपन्यास का सौन्दर्य बढ़ गया है। पाठक के मन में एक-एक शब्द के संकेत से एक-एक दृश्य को उभारने में अत्यंत सफलता प्राप्त हुई है।

५:४:२:१२ <u>प्रतीकात्मक शैली</u> :-

उपन्यास के पात्रों की भाव-भूमि, वैचारिकता एवं बौध्दिकता की अभिव्यक्ति में जहाँ कठिनाई महसूस होती है वहाँ प्रतीकात्मक शैली का प्रयोग किया जाता है। भावाभिव्यक्ति को सहज एवं प्रभावशाली ढंग से व्यक्त करने के लिए इस शैली का विकास हुआ है। जिससे औपन्यासिक कलात्मकता बढ़ती है। "अन्ततः" में प्रतीकों की मनःस्थितियों को चित्रित किया है, साथ ही महत्वपूर्ण घटनाओं को भी प्रकट किया है। "बाहर और भीतर सब तरफ अंधेरा है।.....आकाश में चाँद बादलों के धुँए से छिपने लगा है।"[२] आकाश भी गुमसुम है। ठीक उनके मन की तरह। आकाश। मन। मन का प्रतिबिम्ब-आकाश।"[३]

देवेशजी ने वसुधा के कुंठित जीवन का एवं असहायता का चित्रण इसप्रकार किया है -

"शाम गहराने लगी है।
पत्तियों का रंग श्यामल पड़ने लगा है।

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.३८
२. - वही - - वही - - पृ.४१
३. - वही - - वही - - पृ.१२८

दूर एक ठूँठ खड़ा है।

कभी-कभी ठूँठ भी सुन्दर लगता है लेकिन वह छाया नहीं देता।

छाया....।

अपनी छाया में तो कोई नहीं सुस्ता सकता न....।"[१]

वसुधा और अतुल के संदर्भ में "आकाश से बरसता हुआ बादल और अमृत नहायी धरती"[२] के सुन्दर प्रतीकों का प्रयोग किया है।

पसरीचा तथा वसुधा की मानसिकता एवं धुंधले भविष्य को भी कई जगहोंपर प्रतीकात्मक रूप में अभिव्यक्त किया है - "बस इस खालीपन और कुछ न होने के बीच आप घने अन्धकार में एक मद्धिम लौ से प्रतीत होते है।"[३]

"आसमान बादलों से भरा है। कितने सारे बादल....। उनका पूरा अस्तित्व ही जैसे बादलों की तरह धुंधला गया है।"[४]

५:४:२:१३ <u>व्यंग्यात्मक शैली</u> :-

जीवन के विविध पहलुओं की यथार्थ अभिव्यक्ति के लिये व्यंग्य एक प्रभावशाली माध्यम है। "देवेश ठाकुर ने अपने उपन्यासों में विसंगतिपूर्ण समाज की विविधताओं से भरी जिन्दगी को सार्थक अभिव्यक्ति देने का प्रयास किया हैं। इसीलिए भाषा में व्यंग्यात्मकता एवं पैनापन है।"[५] देवेशजी प्रचलित भ्रष्ट व्यवस्था से असंतुष्ट है। क्यों कि, सामान्य जनता महँगाई और भ्रष्ट व्यवस्था के आतंक से पीड़ित है। अतः प्रचलित व्यवस्था के विरोध में आक्रोश प्रकट होना स्वाभाविक है। देवेशजी का यह आक्रोश निम्नांकित पंक्तियों में स्पष्ट झलकता है। "आज पूरा देश पंचवर्षीय योजनाओं की असफलताओं, कस्बों और गाँवो में बढ़ती हुई जहरीली बदहाली और बेरोजगारी, मन्त्री से लेकर सन्त्री तक फैलते हुए भयावह भ्रष्टाचार और सीमा का अतिक्रमण करते हुए मूल्यों के -हास से पीड़ित है। इससे जनतन्त्र का पूरा ढाँचा

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.७४
२. - वही - - वही - - पृ.२६
३. - वही - - वही - - पृ.११०
४. - वही - - वही - - पृ.१५०
५. प्रो.सतीश पाण्डये : "कथा शिल्पी देवेश ठाकुर - पृ.१४५

ही हिलने लगा है। आक्रोश और हिंसा के साथ साथ निराशा और मारक नशीला पलायन नयी पीढ़ी को जकड़ने लगा है। दूसरी ओर, जन आंदोलन हो अवश्य रहे हैं लेकिन वे आम आदमी के लिये कारगर मुद्दों को लेकर नहीं, जाति, सम्प्रदाय और धार्मिकता के खूंटे से बंधे हुए अधिक है।.....दरअसल, कुर्सीधारी जनवादी आकाओं की यह एक महीन साजिश है। जनवादी आकाओं का यह गिरोह मंच पर तो क्रान्तिकारी दिखता है लेकिन अपने ड्राइंग रूम और बेडरूम में घोर ब्राह्मणवादी और प्रतिक्रियावादी है। देश को चिंतन के स्तर पर सबसे बड़ा खतरा, इन्ही प्रपंचियों से है। गरीबी, बदइन्तजामी, बेहाली और बेईमानी के इस सड़े हुए माहौल में ये मिथक और सौंदर्यशास्त्र की रसोई बनाने में मशगूल हैं। इनकी इस साजिश को पहचानने की कोशिश होनी चाहिये।"[१]

इसप्रकार देवेशजी ने अपनी विशिष्ट व्यंग्यात्मक शैली में पूरी व्यवस्था के प्रति अपना आक्रोश प्रकट किया है।

५:४:२:१४ <u>दृश्य शैली</u> :-

दृश्य शैली पात्रों के मनोविश्लेषण के लिए अत्यंत उपयुक्त है। "इस शैली में छोटे-छोटे दृश्यों के माध्यम से वातावरण और पृष्ठभूमि के साथ साथ पात्रों की रूपाकृति एवं कार्यों का सजीव चित्र खींचा जाता है।"[२]

विराट दृश्यों को शब्दों के माध्यम से संक्षेप में प्रस्तुत करने के लिए लेखक दृश्य शैली का सहारा लेता है। पात्रों के कार्य घटनाएँ तथा जीवन खण्डों के दृश्य इसप्रकार प्रस्तुत किए जाते है कि पाठक उन प्रसंगो के साथ तादात्म्य प्राप्त करते हैं। "अन्ततः" में राघवन की मनस्थिति का दृश्य इसप्रकार चित्रित किया है -

---

१. डॉ. देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.११३

२. प्रो.सतीश पाण्डये : "कथाशिल्पी : देवेश ठाकुर" - पृ.१२७

"राघवन खामोश है। लेकिन आवेश उसकी आँखो में खौल रहा है। एक बौखलाहट- अपमान से उपजी बौखलाहट उसके भीतर फैलती जा रही है। उसे लगता है कि जैसे किसी उँची पहाड़ी से उसे धकेल दिया गया हो और वह लड़खड़ा कर संभलने की कोशिश कर रहा हो।"[१]

"अन्ततः" मे नारी सौंदर्य का दृश्याकंन भी प्रभावशाली ढंग से हुआ है -

"एक महिला सामने खड़ी है। तन्वंगी।

रेंशमी साडी।

घुँघराले बाल।

बड़ी-बड़ी आँखें।

तीखे नक्श।

पूरा भूगोल आकर्षक है।"[२]

"उन्हें कुछ नहीं दीख रहा। बस, एक मुस्कान। एक ताजे कमल-सी मुखाकृति। एक लोचदार देहयष्टि। और सम्भावनाओं के दो बड़े-बड़े युगल और उनको अपलक देखती पनीली आँखोंकी जोडी।"[३] वसुधा की बदलती मनस्थिति का चित्र - "....अमावस की रात में वह बीहड़ बंगल के बीच अकेली चली जा रही है। उसके पावों के नीचे न कोई रास्ता है और आँखों के सामने न कोई गंतव्य। फिर भी वह चली जा रही है।"[४] इसतरह के कई दृश्यों ने उपन्यास को आकर्षक बना दिया है।

५:४:२:१५ <u>विसादृश्य शैली</u> :-

स्थितियों को प्रभावशाली रूप देने के लिए विरोधी प्रकृति की वस्तुओं को आमने सामने रखवाकर चित्रण किया जाता है। इस शैली का सुन्दर प्रयोग वसुधा की बदलती मनःस्थितियों

---

१. डॉ. देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.१०५
२. - वही - - वही - - पृ.९
३. - वही - - वही - - पृ.२२
४. - वही - - वही - - पृ.२४

के अनुकूल किया है।

"बाहर कोई पक्षी चिंचियाने लगता है। वसुधा करवट बदल लेती है। उसे लगता है, उसके भीतर भी कोई कुछ इसीतरह चिंचिया रहा है। वह महसूस करती है कि एक चेहरा- हँसमुख, आकर्षक, नटखट, चेहरा उसकी बंद आँखों के सामने खुलने छिपने लगा है।"[१]

इसमें बाहर के वातावरण और पसरीचा के अभावयुक्त जीवन का विसादृश्य चित्रित हुआ है। जैसे - "आसमानमें सूनापन फैला है, हवा चुप हो गयी है। नीचे सड़क पर गाड़ियों का मोनोटोनस शोर है। लेकिन पसरीचा के भीतर एक पराजित होते व्यक्ति का अहसास गड़गड़ा रहा है। एक अपमान और उपेक्षा का भाव।"[२]

> "पद। मान। प्रतिष्ठा। स्वीकृति। आयोजन। गोष्ठियाँ मीटिंगे। हवाई यात्राएँ। देश-विदेश। होटल। रेस्तराँ। फाइवस्टार। ए ग्रेड। लेकिन फिर भी खालीपन है। सूना मन। सूनी आत्मा। सारी चमक-दमक फीकी लगती है। सब कुछ नीरस। इतनी सारी उपलब्धियाँ। इतना सारा सम्मान इतनी सारी स्वीकृति। फिर भी इतना भारी सूनापन।"[३]

इसतरह इन विसादृश्यों की योजना करके लेखक ने सफलता के साथ अनेक स्थलों-संदर्भों में प्रभाव-क्षमता को गहराया है जिसके कारण कथ्य पाठक के मनपर गहरा प्रभाव छोडता है।

५:४:२:१६ <u>एकालाप शैली</u> :-

आधुनिक उपन्यासों में विविध मनोवैज्ञानिक शैलियों के प्रयोग के साथ-साथ एकालाप शैली का भी विकास हुआ है। जिसमें पात्र स्वयं को ही सम्बोधित करते हुए विभिन्न स्थितियों

---

१. डॉ. देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ. ८३

२. - वही - - वही - - पृ. ९३

३. - वही - - वही - - पृ. २१

का विश्लेषण करता है। और एक निश्चित निश्चय पर पहुँचता है। "अन्ततः" की वसुधा अनेको बार स्वयं सम्बोधित होती हुअी चित्रित हुअी है। वसुधा विवशता एवं कमजोरी के कारण कोई निर्णय नहीं लेती। वह अपने को अकेला और हीन अनुभव करती है तो उसकी आत्मा बोलती प्रतीत होती है -

"तुम अपनी जिम्मेदारी से बचने के लिए दूसरों के निर्णय मानती हो। ताकि बाद में गड़बड़ होने पर अपने को दोषमुक्त समझ सको। यही तुम्हारा सबसे बड़ा दोष है। कमजोरी है। पलायन है। अपने पर, अपने व्यवहार पर तुम कोई धब्बा लगा हुआ नहीं देखना चाहती। तुम अपने में आश्वस्त होना चाहती हो, कि तुम ठीक थी। बस, दूसरों के कहने में आकर तुम गलती कर बैठीं। यह साहसहीनता है। तुम साहसहीन हो तुममें परिस्थितियों का सामना करने की हिम्मत नहीं है। तुम चारों ओर से सुरक्षित रहना चाहती हो...। बस, बस इसीलिये निर्णय ले पाने में संकोच करती हो....। लेकिन इस बार तुमे निर्णय लेना ही पड़ेगा....।"[१]

इसीतरह पसरीचा भी अपने बीमारी के दिनों में अपने मन से कहते हैं "जीवन की इस प्रौढ़ी में ऐसी भी यात्रा करनी पड़ेगी, यह नहीं सोचा था। तभी उनके भीतर एक मन और है जो उन्हें आश्वस्त करता है, कहता है - इस स्थिति से निकलना ही होगा। भय, शंका और शिथिलता के इस संघर्ष से पार पाना ही होगा। अभी तो यात्रा लम्बी है। यह तो एक पड़ाव मात्र है। कुछ ही देर के लिए सुस्ताना है। फिर अपने सफर पर आगे बढ़ जाना है? एक नयी जिंदगी के साथ.....।एक नया लक्ष्य.....एक नया उद्देश्य....। अभी तो बहुत कुछ करना है।"[२] इसप्रकार उपर्युक्त उध्दरणों से स्पष्ट है कि देवेश ठाकुर के "अन्ततः" उपन्यास में एकालाप का सार्थक प्रयोग हुआ है।

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.१३९

२. - वही - - वही - - पृ.१५१

५:४:२:१७ सिनेरिया शिल्प :-

हिन्दी उपन्यास के शिल्प को सिनेमा की विविध तकनिकों ने प्रभावित किया है। सिनेमा की "क्लोज-अप" स्लो-अप" और "कट-बॅक" पध्दतियाँ इस शैली में प्रयुक्त हुयी है। सिनेमा की फोटोग्राफी-तकनीकी को देवेशजी ने अपनाया है। यह तकनीक चेतना-प्रवाह की अभिव्यक्ति में सहयोगी रही है। "अन्ततः" में भी इसके प्रयोग मिलते है। जैसे -

"किचन रेष्ट्रॉ।.....

ड्रिंक्स। स्नैक्स। लंच। रशियन सलाद।

बाते।

आफिस। डी.ए.। खाडी-युध्द। बहसें। इस्त्राइल। ब्रिटेन। सीरिया

बुश। अराफात। और सद्दाम हुसैन....।"[१]

क्लोज-अप पध्दत्ति के प्रयोग भी कहीं- कहीं पर मिलते है। "वसुधा की नींद उचट गयी है। लेकिन तभी उसे लगता है कि उस धुँधलके के बीच से एक चेहरा उभर कर उसके सामने आ खड़ा होता है। यह पसरीचा का चेहरा है। चेहरे की आँखे उसकी ओर मुस्कराती सी ताकने लगती है। चेहरे के ओठ खुलते है। ओठों से एक गहरा स्वर उसके कानों पर थाप मारने लगता है।"[२] चेहरा काफी स्पष्ट है.....। तभी उसके भिंचे हुए होठ खुलने लगते है..... और उनमें एक मादक हँसी मुस्कराने लगती है....। अब यह चेहरा एक नए चेहरे में बदलने लगता है। यह सुभाष है.....। सुभाष। सुभाष का चेहरा उसकी संपूर्ण देहयष्टि में बदलने लगता है। एक भरी-पूरी देह यष्टि में.....।सुन्दर, आकर्षक खुली-खिली हुयी देहयष्टि में।"[३]

और एक उदाहरण -

"एक्सेलसियर।

"बाल्कनी....।

विज्ञापन चल रहे है।

---

१. डॉ. देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.८५
२. - वही - - वही - - पृ.९६
३. - वही - - वही - - पृ.९८

हॉल में हल्की रोशनी है।

राघवन का हाथ वसुधा की पीठ पर है।.....।

राघवन सामने स्क्रीन पर देखने लगता है। स्क्रीन पर फैमिली प्लानिंग का विज्ञापन चल रहा है। पिक्चर शुरू हो गया है। गीत चल रहा है। नायक नायिका काश्मीर की बर्फ पर फिसल रहे है।"[१]

५:४:२:१८ <u>निष्कर्ष</u> :-

देवेशजी ने "अन्ततः" उपन्यास में अपनी रचनाधर्मिता का अभिनव प्रयोग किया है। उपन्यास के विषय के अनुरूप विविध शैलियों का भी उपयोग किया है। अतः नाटकीय प्रसंगों की उद्‌भावना तथा प्रसंगानुसार विविध शैलियों का सुन्दर समन्वय स्थापित किया है। देवेशजी के शैली की यह विशेषता रही है कि, उन्होंने किसी निश्चित एवं समान शिल्पविधि का प्रयोग नहीं किया।

"अन्ततः" प्रमुखता मनोविश्लेषणात्मक पध्दत्ति पर ही आधारित है। उपन्यास के अत्यन्त संक्षिप्त से कथानक को जो विस्तार मिल पाया है वह सब वस्तुतः मनविश्लेषण का ही परिणाम है। मुख्य पात्रों के विश्लेषण की ही वस्तुतः उपन्यास में अधिकता है। वसुधा का चरित्र अन्य पात्रों द्वारा भी विश्लेषित हुआ है। पात्रों के चारित्रिक उद्‌घाटन के लिए संवादशैली का आश्रय लिया है। पूर्व दीप्ति का कुशलता से उपयोग किया है। प्रमुख पात्र वसुधा और पसरीचा अतीत जीवन में व्यतीत अपने जीवन का स्मृतियों के आधारपर वर्णन, विवेचन और विश्लेषण करते है। चेतना प्रवाह शैली द्वारा वसुधा की अंतश्चेतना का प्रभावपूर्ण चित्रण किया है। पूर्व दीप्ति और चेतना प्रवाह शैली का अत्यधिक गरिमापूर्ण ढ़ंग से प्रयोग हुआ है। मध्यवर्गीय विवशताओं में फँसे व्यक्ति के मन में चल रहे द्वन्द्वों और उलझनों को व्यक्त करने का सशक्त माध्यम भी यही है। इसके अतिरिक्त देवेशजी ने फिल्मों की "फ्लैश बॅक" पध्दत्ति एवं फोटोग्राफिक तकनीक भी अपनायी है।

---

१. डॉ.देवेश ठाकुर : "अन्ततः" - पृ.५४

डायरी शैली तथा पत्र शैली का भी सुन्दर एवं सार्थक प्रयोग किया है। जिससे पात्रों के अन्तर्मन के गूढ एवं रहस्यमय तथ्यों की अभिव्यक्ति अत्यन्त प्रभावशाली ढंग से हुयी है। पत्र शैली अत्यंत मार्मिक एवं भावनाशील है। विविध दृश्यों की योजना करके लेखक ने जो नाटकीय प्रभाव उपन्यास में उत्पन्न किये हैं वे दृश्य तथा नाटयशैली के प्रयोग के कारण ही बन पडे हैं। पात्रों के चारित्रिक गठन के स्वरूप का उद्घाटन करने के लिए प्रतीकों का सुन्दर विधान किया है।

सांकेतिक, विवरणात्मक, आत्मकथात्मक, विसादृश्य, एकालाप, उध्दरण तथा प्रखर व्यंग्यशैली के कारण अभिव्यक्ति कौशल में संप्रेषणीयता एवं कलात्मकता आ गयी है।

समग्रतः भाषाशैली इतनी सारगर्भित, सुगठित और नियंत्रित है कि, कहीं एक वाक्य या शब्द तक अनावश्यक नहीं है। चुने हुए शब्दों द्वारा वांछित बात को कम से कम शब्दों में कहना उनकी शैलीका वैशिष्टय है। लेखक की प्रवृत्ति सदैव संक्षिप्तीकरण की ओर रही है। विविध शिल्प शैलियों के संयोग से एक अनुपम शिल्प शैली निर्माण हुअी है इसे हम देवेश शैली भी कह सकते हैं। उपन्यास के प्रस्तुति शिल्प के संदर्भ में यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि, देवेशजी ने शिल्पविधान की नयी सम्भावनाओं का अविष्कार किया है। जो हिन्दी उपन्यास को नवीन गति, दिशा प्रदान करनेवाला है।

नारी के अन्तर्द्वन्द्व और उसके निर्णय की वस्तुपरक कथा की सफल अभिव्यक्ति के लिए प्रस्तुत शिल्प समर्थ है। उपन्यास के तत्वों के प्रचलित ढाँचे को तोड़ने एवं प्रस्तुति शिल्प के क्षेत्र में भी नवनवीन प्रयोग करने की प्रयोगशील वृत्ति देवेशजी की उपन्यास कला की सबसे बडी विशेषता है। "अन्ततः" के द्वारा उन्होंने दिखा दिया है कि वह कुशल चित्रकार और शब्द शिल्पी है। "अन्ततः" नवीन प्रयोग होते हुए भी अभिनव एवं पूर्णतया समृध्द है।

-o-o-o-